सत्यमेव जयते

भारत सरकार

भारत का विधि आयोग

राजद्रोह विधि का उपयोग

रिपोर्ट सं. 279

अप्रैल, 2023

22वें विधि आयोग का गठन भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय के विधि कार्य विभाग, नई दिल्ली द्वारा जारी आदेश संख्या एफ. सं. 45021/1/2018-प्रशा.-III (एल.ए.) तारीख 21 फरवरी, 2020 द्वारा गजट अधिसूचना द्वारा तीन वर्ष की अवधि के लिए किया गया । 22वें विधि आयोग की अवधि का विस्तार आदेश सं. एफ.ए..ए. सं. 60011/225/2022-प्रशा.-III(एल.ए.) तारीख 22 फरवरी, 2023 द्वारा किया गया ।

विधि आयोग अध्यक्ष, तीन पूर्णकालिक सदस्य, सदस्य सचिव, दो पदेने सदस्य और दो अंशकालिक सदस्य से मिलकर बना है ।

अध्यक्ष

माननीय न्यायमूर्ति ऋतु राज अवस्थी

पूर्णकालिक सदस्य

माननीय न्यायमूर्ति के. टी. शंकरन
प्रो.(डा.) आनंद पालीवाल
प्रो. डी. पी. वर्मा

सदस्य सचिव

डा. नितेन चंद्रा

पदेन सदस्यी

डा. नितेन चंद्रा, सचिव, विधि कार्य विभाग
डा. रीता वशिष्ठ, सचिव, विधायी विभाग

अंशकालिक सदस्य

श्री एम. करुनानिथी
प्रो. (डा.) राका आर्या

विधि अधिकारी

श्रीमती वर्षा चंद्रा : संयुक्त सचिव एवं विधि अधिकारी
श्री अतुल कुमार गुप्ता : उप विधि अधिकारी

विधि परामर्शी

श्री ऋषि मिश्रा
श्री गौरव यादव
श्री शुभांग चतुर्वेदी
श्री देविन्दर सिंह

विधि आयोग, द्वितीय और चतुर्थ तल,
बी-विंग, लोकनायक भवन, खान मार्केट, नई दिल्ली-110003 पर स्थित है ।

यह रिपोर्ट www.lawcommissionofindia.nic.in की वेबसाइट पर उपलब्ध है ।
© भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

Justice Ritu Raj Awasthi
(Former Chief Justice of High Court of Karnataka)
Chairperson
22nd Law Commission of India

न्यायमूर्ति ऋतु राज अवस्थी
(सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश, कर्नाटका उच्च न्यायालय)
अध्यक्ष
भारत के 22वें विधि आयोग

अ.शा.प. सं. 6(3)302/2016-एल.सी.(एल.एस.) तारीख : 24 मई, 2023

माननीय श्री अर्जुन राम मेघवाल जी

नमस्कार ।

मुझे "**राजद्रोह विधि के उपयोग**" पर भारत के विधि आयोग की 279वीं रिपोर्ट आपको अग्रेषित करते हुए हर्ष हो रहा है । विधि आयोग को भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के उपबंध के उपयोग के अध्ययन के लिए और संशोधन, यदि कोई है, का सुझाव देने के लिए विधि और न्याय मंत्रालय को संबोधित तारीख 29 मार्च, 2016 द्वारा भारत सरकार के गृह मंत्रालय से एक निर्देश प्राप्त हुआ ।

भारतीय दंड संहिता की धारा 124क की संवैधानिकता की चुनौती **एस.जी. बाम्बेटकरे** बनाम **भारत संघ** [(2022)7 एस.सी.सी. 433] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष दी गई । भारत संघ ने माननीय उच्चतम न्यायालय को आश्वस्त किया कि वह धारा 124क की पुन:परीक्षा कर रहा है और न्यायालय ऐसा कर अपना बहुमूल्य समय नष्ट न करे । इसके अनुसरण में और तारीख 11 मई, 2022 को पारित आदेश द्वारा माननीय उच्चतम न्यायालय ने केंद्रीय सरकार को निदेश दिया कि सभी राज्य सरकारें धारा 124क के संबंध में सभी जारी अन्वेषणों को रद्द करते समय कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्टर करने या कोई प्रपीड़क उपाय लेने से विरत रहें । आगे, यह भी निदेश दिया कि सभी लंबित विचारणों, अपीलों और कार्यवाहियों को आस्थगित रखा जाए ।

22वें विधि आयोग ने तारीख 7 नवंबर, 2022 की अधिसूचना द्वारा अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति के पश्चात् तत्काल इस निर्देश पर कार्य आरंभ किया और आपके विचारार्थ यह अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहा है । हमने भारत में राजद्रोह के उद्भव और विकास का पता लगाते हुए और इसके उपयोग से संबंधित विधि का व्यापक अध्ययन किया । आयोग ने औपनिवेशिक और स्वतंत्र भारत दोनों में, विभिन्न अधिकारिताओं में राजद्रोह की विधि और विषय पर माननीय उच्चतम न्यायालय और माननीय उच्च न्यायालयों के विभिन्न विनिर्णयों का भी विश्लेषण किया ।

परिणामत:, विधि आयोग का विचारित मत है कि धारा 124क को भारतीय दंड संहिता में प्रतिधारित रखे जाने की आवश्यकता है, यद्यपि दिए गए सुझाव के अनुसार **केदार नाथ सिंह** बनाम **बिहार राज्य** [ए.आई.आर 1962 एस.सी. 955] वाले मामले के विनिश्चयाधार को सम्मिलित करते हुए कतिपय संशोधन किए जाएं जिससे कि उपबंध के उपयोग के बारे में अधिक स्पष्टता सुनिश्चित की जा सके । हम आगे यह सिफारिश करते हैं कि यह सुनिश्चित करने के लिए

उक्त धारा में उपबंधित दंड की स्कीम को संशोधित किया जाए, जिससे कि इसे भारतीय दंड संहिता के अध्याय VI के अन्य अपराधों के समतुल्य लाया जा सके । तथापि, धारा 124क के दुरुपयोग से संबंधित मतों के संज्ञान के संबंध में, आयोग यह सिफारिश करता है कि इसे मिटाने के लिए केंद्रीय सरकार द्वारा आदर्श मार्गदर्शक सिद्धांत जारी किए जाए । इस संदर्भ में, अनुकल्पतः यह भी सुझाव दिया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (दं. प्र. सं.) की धारा 196(3) के समतुल्य उपबंध को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के उपबंध के रूप में सम्मिलित किया जाए जो भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन अपराध के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल करने के पहले अपेक्षित प्रक्रियागत सुरक्षोपाय उपलब्ध कराएगा ।

इन सिफारिशों के कारणों पर विस्तार से संलग्न रिपोर्ट में चर्चा की गई है और आयोग का दृढ़ विश्वास है कि इसको सम्मिलित करने से इस उपबंध के उपयोग से सहबद्ध चिंताओं के निवारण में सहायता मिलेगी ।

सादर,

भवदीय,
ह0/-
(न्यायमूर्ति ऋतु राज अवस्थी)

श्री अर्जुन राम मेघवाल
माननीय राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-110001

कार्यालय पता : कमरा नं. 405, चतुर्थ तल, 'बी' विंग, लोक नायक भवन, खान मार्किट, नई दिल्ली - 110003
Office Address : Room No. 405, 4th Floor, 'B' Wingh, Lok Nayak Bhawan, Khan Market, Nerw Delhi -110003
अवासीय पता : बंगला नं. 8, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली -110011
Residence : Bungalow No. 8, Tees January Marg, New Delhi- 110011
Email : rituraj.awasthi@gov.in Tel : 011-24654951 (D), 24340202, 24340203

<u>**अभिस्वीकृति**</u>

इस रिपोर्ट के विषय-वस्तु का प्रतिनिर्देश प्राप्त होने के पश्चात् विधि आयोग ने सभी सुसंगत पणधारियों, विद्वानों, शिक्षाविदों, प्रबुद्ध व्यक्तियों आदि से व्यापक विचार-विमर्श किया । इस विषय पर किए गए प्रारंभिक अनुसंधान के अनुसरण में, विधि आयोग ने संबद्ध प्रबुद्ध व्यक्तियों और आम जनता से विचार और सुझाव आमंत्रित करते हुए बेवसाइट पर "राजद्रोह" विषय पर परामर्श पत्र अपलोड किया । हम उन सभी लोगों के प्रति बहुत कृतज्ञ हैं, जिन्होंने राजद्रोह से संबंधित विधि पर अपना सुझाव और निवेदन देने के लिए अपना बहुमूल्य समय लगाया ।

इस प्रकार दिए गए सुझावों पर विचार करते हुए, आयोग ने पुन: विषय-वसतु की जटिलताओं को समझने के लिए प्राचार्यों और शिक्षाविदों से परामर्श किया । हम ऐसे व्यक्तियों के प्रति अपनी सहृदय कृतज्ञता व्यक्त करते हैं । मैं प्रस्तुत विषय पर हमारे साथ गहन चर्चा करने के लिए प्रो. (डा.) अनुराग दीप, भारतीय विधि संस्थान के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं । उनके अंर्तदृष्टिपूर्ण बातों से जटिल विधिक अवसंरचना को आसानी से समझने में मुझे सहायता मिली ।

आयोग **श्री ऋषि मिश्र, श्री गौरव यादव** और **श्री शुभांग चतुर्वेदी,** परामर्शी द्वारा इस रिपोर्ट को तैयार करने में दी गई सराहनीय सहायता को स्वीकार करता है । हम इस रिपोर्ट के अनुसंधान और प्रारुपण में उनके श्रमसाध्य प्रयासों की सराहना करते हैं ।

विषय सूची

क्र. सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
1.	**प्रस्तावना**	8
	क. विचारार्थ विषय	8
	ख. राजद्रोह की अवधारणा का उद्भव और विकास	8
	ग. भारत में राजद्रोह की विधि की उत्पत्ति और विकास	10
2.	**आयोग की पूर्व रिपोर्टें**	13
3.	**राजद्रोह पर संविधान सभा की बहस**	15
4.	**भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का न्यायिक निर्वचन**	23
	क. स्वतंत्रता के पूर्व राजद्रोह पर न्यायिक विनिश्चय	23
	ख. संविधान के अधिनियम के पश्चात् राजद्रोह पर न्यायिक विनिश्य	27
	1. केदारनाथ सिंह वाले मामले के निर्णय के पूर्व राजद्रोह पर विनिर्णय	27
	2. केदारनाथ सिंह वाले मामले में निर्णय	31
	3. केदारनाथ वाले मामले के निर्णय के पश्चात विनिर्णय	33
5.	**वाक् स्वातंत्र्य सापेक्ष राजद्रोह**	36
5.	**भारत की आंतरिक सुरक्षा को खतरा**	40
	क. माओवादी अतिवाद	41
	ख. उत्तरपूर्व में उग्रवाद और मानव जातीय विद्रोह	42
	ग. जम्मू और काश्मीर में आतंकवाद	44
	घ. देश के अन्य भागों में अलगाववादी गतिविधियां	46
7.	**भारतीय दंड संहिता की धारा 124 का अभिकथित दुरुपयोग**	48
8.	**अन्य देशों में राजद्रोह की विधियां**	50
	क. यूनाइटेड किंगडम	50
	ख. यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका	53

	ग. आस्ट्रेलिया	57
	घ. कनाडा	58
9.	**निष्कर्ष : धारा 124क के प्रतिधारण का आधार**	61
	क. भारत की एकता और अखंडता के सुरक्षोपाए	61
	ख. राजद्रोह अनुच्छेद 19(2) के अधीन युक्तियुक्त निर्बंधन है	62
	ग. आतंक-विरोधी विधान की विद्‌यमानता धारा 124क की आवश्यकता को दूर नहीं करता	63
	घ. औपनिवेशिक विरासत होने के कारण राजद्रोह निरसन का विधिमान्य आधार नहीं है	64
	ड. प्रत्येक अधिकारिता में वास्तविकताएं भिन्न-भिन्न हैं	65
10.	**सिफारिशें :-**	66
	क. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क में केदारनाथ वाले मामले के निर्णय के विनिश्चयाधार का सम्मिलन	66
	ख. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के किसी अभिकथित दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रक्रियागत मार्गदर्शक सिद्‌धांत	66
	ग. भारतीय दंड संहिता की धारा 124**क** के लिए विहित दंड की विषमता का निराकरण	67
	घ. भारतीय दंड संहिता की धारा 124**क** के संशोधन का प्रस्ताव	67

राजद्रोह विधि का उपयोग

1. प्रस्तावना

क. विचारार्थ विषय

1.1 विधि आयोग को भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के उपबंध के उपयोग के अध्ययन के लिए और संशोधन, यदि कोई है, का सुझाव देने के लिए विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय को संबोधित तारीख 29 मार्च, 2019 के पत्र द्वारा भारत सरकार के गृह मंत्रालय से एक निर्देश प्राप्त हुआ । उक्त पत्र में यह भी उल्लेख था कि चूंकि विधि आयोग पहले से ही आपराधिक विधियों का व्यापक पुनर्विलोकन कर रहा है इसलिए यह ऐसे पुनर्विलोकन के अनुक्रम में भारतीय दंड संहिता की धारा 124क से संबंधित मुद्दों पर भी विचार करे । यहां, यह भी इंगित किया गया है कि तारीख 7 जुलाई, 2010 के पत्र द्वारा तत्कालीन गृह मंत्री ने तत्कालीन विधि मंत्री को भारत के विधि आयोग द्वारा आपराधिक दंड विधियों के व्यापक पुनर्विलोकन के लिए एक निर्देश भेजा था और तदनुसार, विधि कार्य विभाग ने आपराधिक विधियों के व्यापक पुनर्विलोकन के लिए तारीख 14 जून, 2013 के पत्र द्वारा विधि आयोग को यह निर्देश भेजा ।

1.2 जहां तक दंड विधियों के व्यापक पुनर्विलोकन का संबंध है, यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि 21वें विधि आयोग ने इस योजना पर खंडश: कार्य करना आरंभ किया और आपराधिक न्याय प्रणाली से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर छह रिपोर्टें अर्थात् रिपोर्ट सं. 264, 267, 268, 271, 273 और 277 प्रस्तुत की । |

1.3 22वें विधि आयोग ने 17 जनवरी, 2023 को हुई इसकी पहली बैठक में राजद्रोह विधि के उपयोग पर चर्चा की और आयोग का यह विचारित मत था कि हाल ही में हुई विभिन्न गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए इस पर व्यापक विचार-विमर्श की अपेक्षा है । इस संबंध में आयोग ने तारीख 16 जनवरी, 2023 के पत्र द्वारा गृह मंत्रालय से अपनी टिप्पणी देने का अनुरोध किया । आयोग द्वारा अनुस्मारक पत्र भी जारी किए गए । तथापि, मामले की अतिआवश्यकता को देखते हुए, आयोग ने विभिन्न पणधारियों और विद्वानों से इस मुद्दे पर चर्चा की और विषय-वस्तु पर विस्तार से अनुसंधान किया और इस प्रकार इस रिपोर्ट को अंतिम रूप दिया ।

ख. राजद्रोह की अवधारणा का उद्भव और विकास

1.4 राजद्रोह पर विधि के उद्भव का पता इंग्लिश विधि से लगाया जा सकता है । सामंतवादी इंग्लैंड में, राजद्रोह में ऐसा अपमान लेख और अपमान वचन सम्मिलित है जो शासक को अपनी प्रजा से अलग करता है ।[1] परंपरागत रूप से, 'राजद्रोह' के विधिक तत्व दुरुह थे और इस प्रकार, सक्षिप्त

[1] रोगर बी. मैनिंग, 'द ओरिजिन आफ डाक्ट्रिन आफ सेडीशन' 12 एलवियन : एक्वांटरली जर्नल ब्रिटिशन अध्ययन से संबंधित 100 (1980) ।

परिभाषा देना संभव नहीं था । ऐसे अपराध जिन्हें अब 'राजद्रोह' के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, को 'देशद्रोह' या स्कैंडलम मैगनेटम या सामरिक विधि के अधीन अभियोजित किए जाते थे ।[2]

1.5 सोलहवीं शताब्दी के अंत में, 'राजद्रोह' पद **का** नया अभिप्राय राज्य के प्रति या इसके संविधायी प्राधिकारी के प्रति शब्दों या लेखों द्वारा असंतोष भड़काने की धारणा उभर कर आया ।[3] इस द्वितीयक परिभाषा ने देश द्रोह से भिन्न 'राजद्रोह' की समझ पैदा की और इससे निश्चित रूप से हिंसा कार्यों में प्रत्यक्ष लिप्त न होकर बल्कि ऐसे कार्यो के संभाव्य प्रेरक के रूप में कार्य करना प्रकट करता है ।

1.6 1606 में, कोर्ट आफ स्टार चैम्बर ने **डे लिबेलिस फैमोसिस**[4] वाले मामले में राजद्रोहात्मक अपमान लेख के आवश्यक तत्वों की रुपरेखा तैयार की और इस प्रकार यूनाइटेड किंग्डम में 'राजद्रोहात्मक अपमान लेख' के अपराध की आधारशिला रखी ।[5] चैम्बर ने 'राजद्रोह' को भड़काउ शब्द बोलकर, कतिपय अपमान पर लेख प्रकाशित कर और अन्य लोगों के साथ मिलकर प्राधिकार में बैठे लोगों के प्रति घृणा या अपमान पैदा करने का षड्यंत्र करना, जिससे अपमान लेख की सत्यता और असत्यता महत्वहीन था, के रूप में परिभाषित किया ।[6] यह राजद्रोहात्मक अपमान लेख का सिद्धांत 1641 में स्टार चैम्बर न्यायालय के उत्सादन के पश्चात् भी चलता रहा और दो शताब्दियों तक कामन ला अपमान लेख और अपमान वचन सिद्धांत को प्रभावित किया । यह इस बात पर बल देता है कि यह सरकार को दुर्बल करने की मात्र आलोचना की प्रवृत्ति है, जो बर्ताव को दंडात्मक अपराध बनाता है ।

1.7 'राजद्रोहात्मक आशय' की उत्कृष्ट परिभाषा 1887 में प्रकाशित सर जेम्स स्टीफन के डाइजेस्ट आफ क्रिमिनल ला पुस्तक में मिलती है :-

> " 'राजद्रोहात्मक' आशय एक ऐसा आशय है, जो हर मजेस्टी, उनके उत्तराधिकारियों या वारिसों या सरकार और विधि द्वारा स्थापित यूनाइटेड किंग्डम के संविधान या संसद के दोनों सदन या न्याय प्रशासक के विरुद्ध असंतोष पैदा करना या विधिसम्मत साधनों के अलावा हर मजेस्टी की जनता को उकसाने का प्रयास करना, स्थापित विधि द्वारा चर्च या राज्य में किसी बात का परिवर्तन या शांतिभंग करने के लिए किसी व्यक्ति को उकसाने का कोई अपराध करने के लिए उकसाना या हर मजेस्टी की जनता में असंतोष या अशांति पैदा करना या ऐसी प्रजा के विभिन्न वर्गों के बीच दुर्भाव और विद्रोह की भावना बढ़ाना सम्मिलित करता है ।[7]"

---

[2] आस्ट्रेलियन ला रिफार्म कमीशन, '104वीं रिपोर्ट आन फाइटिंग वर्ड : आस्ट्रेलिया में राजद्रोह विधि पर पुनर्विलोकन' 51 (जुलाई, 2006) (इसमें इसके पश्चात् 'रिपोर्ट आन फाइटिंग वर्ड').

[3] वही पृ. 3 पर

[4] 77 इंग्लिश रिपोर्ट 250 (के.बी. 1606).

[5] विलियम टी. मैयटन 'राजद्रोहात्मक अपमानलेख और वाक् स्वातंत्र्य की अंतिम गारंटी' 84 कोलंबिया ला रिव्यू, 105 (1984).

[6] अनुष्का सिंह, उदारवादी लोकतंत्रों में राजद्रोह, 75 (आक्फोर्ड विश्वविद्यालय प्रसे, नई दिल्ली, 2018).

[7] जैम्स एफ. स्टीफेन, ए. डाइजेस्ट आफ क्रिमिनल ला 66 (मैकमिलन, लंदन, चौथा संस्करण, 1887).

1.8 राजद्रोह को मस्तिष्क में रखते हुए, स्टीफन ने तीन प्रकार के आचरण को वर्गीकृत किया । पहला, देशद्रोह का अपराध ; दूसरा, ऐसा दंडात्मक आचरण, जिसमें बल या हिंसा है और तीसरा, ऐसा आचरण जो दोनों के बीच का है । ऐसा आचरण जो देशद्रोह से कम है और दूसरी ओर जिसमें बल या हिंसा का प्रयोग नहीं है, 'राजद्रोह' के अपराध की परिधि में आता है ।[8] इस प्रकार, राजद्रोह का निर्वचन ऐसे रूप में किया जाता है, जो देशद्रोह से कम होता है और जिसमें प्रत्यक्षत: संलिप्तता नहीं है यद्यपि उनसे हिंसा के कार्य हो सकते है ।[9]

1.9 स्टीफन की परिभाषा राजद्रोह को आचरण अपराध और परिणामी आपराध बनाती है । जब आचरण सरकार के प्रति असंतोष का विधि विरुद्ध प्रदर्शन है, तो यह राजद्रोह की श्रेणी में आता है । वहीं, यदि स्वयं आचरण आपराधिक नहीं है फिर भी आचरण का नैसर्गिक परिणाम सरकार के प्रति असंतोष है, तो भी यह राजद्रोह की श्रेणी में आता है ।[10]

ग. भारत में राजद्रोह विधि की उत्पत्ति और विकास

1.10 राजद्रोह विधि का भारत में बड़ा उतार-चढ़ाव भरा इतिहास रहा है । मैकाले के प्रारुप दंड संहिता (1837-1839) में एक खंड का उपबंध है, जिसमें राजद्रोह के अपराध को इस प्रकार सम्मिलित किया गया है :-

> "धारा 113 : जो कोई ईस्ट इंडिया कंपनी के भू-क्षेत्र में ऐसे लोगों के किसी वर्ग के बीच, जो उस सरकार के अधीन रहते है, बोले गए या पढ़े जाने के लिए आशयित शब्दों या संकेतों या दृश्य रुपण द्वारा अप्रीति की भावना उकसाने का प्रयत्न करता है, वह ईस्ट इंडिया कंपनी के भू-क्षेत्र से आजीवन या किसी अवधि के लिए निष्कासन, जिसके साथ जुर्माना भी लगाया जाएगा या ऐसी अवधि के साधारण कारावास से जो तीन वर्ष तक **का** हो सकेगा, जिसके साथ जुर्माना होगा या जुर्माने से दंडित होगा ।"
>
> **स्पष्टीकरण** : सरकार के उपायों का ऐसा अननुमोदन, जो उस प्राधिकारी को नीचा दिखाने या प्रतिरोध करने के विधि विरुद्ध प्रयासों के विरुद्ध सरकार के विधि सम्मत प्राधिकारी की अवज्ञा करने की व्यवस्था से संगत है, अप्रीति नहीं है । इसलिए, केवल उकसाने के आशय से सरकार के उपायों पर टीका-टिप्पणी करने वाला अप्रीति की यह शाखा इस खंड के भीतर अपराध नहीं है ।[11]

---

[8] एच.जे. स्टीफन एंड एल. क्रिसपिन वार्मिंगटन (एडी), IV स्टीफन कमेन्ट्री आन दि ला आफ इंग्लैंड, 141 (वटवर्थ एंड कं., लंदन, 21वां संस्करण, 1950).

[9] वही

[10] वही

[11] भारतीय विधि कमीशनर द्वारा तैयार और गवर्नर जनरल आफ इंडिया इन काउंसिल द्वारा प्रकाशित दंड संहिता (बंगाल मिलिटरी आर्फन प्रेस, कलकत्ता 1837) https://play.google.com/books/reader?id=Q_pBAAAAYAAJ&pg=GBS.RA l -PA l2&hl=en पर उपलब्ध : (16 फरवरी, 2023 को अंतिम बार देखा)

1.11 प्रथम प्रारूप के दस वर्ष पश्चात्, 1846 में विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता पर दूसरी रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । यद्यपि उपबंध के प्रति विरोध था फिर भी, विधि आयोग के बहुमत ने आक्षेप को स्वीकार नहीं किया क्योंकि दस्तावेजी लेख के तुलना में विशेषज्ञ वक्ता द्वारा भाषण का प्रभाव सरल, तुरंत और अधिक घातक है ।[12]

1.12 सर जान सोमिली, स्वतंत्रा पूर्व द्वितीय विधि आयोग के अध्यक्ष ने इस आधार पर राजद्रोह के लिए प्रस्तावित दंड की मात्रा पर टिप्पणी की कि इंग्लैंड में अधिकतम दंड तीन वर्ष है इसलिए सुझाव दिया कि भारत में यह पांच वर्ष से अधिक नहीं होना चाहिए ।[13]

1.13 तथापि, जब मैकाले का प्रारुप 1860 में भारतीय दंड संहिता (इसमें इसके पश्चात् भारतीय दंड संहिता) के अधिनियमन के रूप में अपना अंतिम आकार प्राप्त किया, तो यह धारा सम्मिलित नहीं थी । यह काफी लोगों के लिए आश्चर्यजनक था । जब इस लोप के बारे में पूछा गया तो श्री जैम्स स्टीफन ने सर बारनेस पीकाक द्वारा श्री मेन को लिखे गए पत्र का उल्लेख किया, जिसमें उन्होंने यह टिप्पणी की थी :-

> "मैंने अपने नोट को पढ़ा और मैं यह समझता हूं कि मूल दंड संहिता की धारा 113 के बदले धारा का लोप भूलवश हो गई [.....] तथापि, मैं महसूस करता हूं कि समिति की ओर से धारा 113 को प्रतिस्थापित न करने की चूक की गई ।[14]"

1.14 इसके पश्चात्, श्री जेम्स स्टीफेन ने इस लोप का सुधार करने का उल्लेख किया । परिणामतः, 1870 के विशेष अधिनियम XVII द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन राजद्रोह को अपराध के रूप में सम्मिलित किया गया । यह देशद्रोही महापराध अधिनियम, 1848 की तरह थी, जो राजद्रोहात्मक अभिव्यक्तियों को दंडित करता है ।[15] इस धारा को सम्मिलित करने के लिए स्टीफन द्वारा उद्धृत कारणों में से एक कारण यह था कि ऐसे उपबंध के अभाव में इस अपराध

---

[12] ए. चंद्रचुड़, रिपब्लिक आफ रिटोरिक : स्वतंत्र भाषण और भारत का संविधान 5 (पेंगुइन, 2017).

[13] हरी सिंह गौड़, II भारत की दंड विधि, 1232 (ला पब्लिशर्स (इंडिया) प्रा. लि., इलाहाबाद, 11वां संस्करण, 2011).

[14] अरविन्द गनचारी, औपनिवेशिक स्थिति में राष्ट्रवाद और सामाजिक सुधार 55 (कालपेज, दिल्ली, 2005).

[15] राजद्रोह महापराध अधिनियम, 1848 https://www.legislation.gov.ukiukp galYictl I I-12/12/section/3 पर उपलब्ध i अधिनियम की धारा 3 में यह उपबंध है :

> "यदि जो कोई यूनाइटेड किंग्डम के भीतर या बाहर हमारी सर्वाधिक दयालु लेडी महारानी की शैली, सम्मान के प्रति षड्यंत्र करता है, कल्पना करता है, उपाय ढूंढता है, युक्ति निकालता है या वंचित या पदच्युत करने का आशय रखता है, या यूनाइटेड किंग्डम के शाही क्राउन के राजतंत्र के नाम या हर मजेस्टी के डोमिनियन या देशों या यूनाइटेड किंग्डम के किसी भाग के भीतर बल द्वारा हर मजेस्टी के विरुद्ध युद्ध छेड़ता है या उनके उपायों का काउंसेलों को परिवर्तित करने के लिए मजबूर करता है या दोनों सदनों या किसी एक सदन को डराने या आतंकित करने के लिए कोई बल या अवरोध या पैदा करता है, या यूनाइटेड किंग्डम या हर मजेस्टी की स्वामिभक्ति के अधीन हर मजेस्टी के किसी अन्य डोमिनियन या देशों पर आक्रमण करने के लिए किसी विदेशी या बाहरी व्यक्ति को उकसाता है और ऐसे षड्यंत्र, कल्पना, आविष्कार, युक्ति, उजागर या घोषित करता है, वह महापराध का दोषी होगा और इससे दोषसिद्ध होते हुए अपने प्रकृतिक जीवन की अवधि तक समुद्र के पार कालापानी भेजे जाने का दायी होगा ।"

को इंग्लैंड की अधिक कठोर कामन ला के अधीन दंडित किया जाएगा ।[16] अत:, इस धारा के अंगीकरण को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कठोर कामन ला से बचाने के स्पष्ट विकल्प के रूप में दर्शाया गया । स्टीफेन के अनुसार, अंगीकृत खंड 'काफी अधिक संपीडित, काफी भिन्न रूप में अभिव्यक्त और ऐसी दुरुहता और अस्पष्टता से काफी अधिक मुक्त है, जिससे इंग्लैंड की विधि उलझी हुई है ।[17] धारा का आशय सरकार के प्रति अप्रीति की भावना भड़काने के कार्य को दंडित करना है, किंतु इस अप्रीति को अननुमोदन से भिन्न करना था । इस प्रकार, लोग सरकार के विरुद्ध अपनी भावना प्रकट करने के लिए स्वतंत्र थे जब तक वे अपने विधिसम्मत प्राधिकार की आज्ञा मानने की इच्छा प्रदर्शित करते ।[18]

1.15 भारतीय दंड संहिता की धारा 124क को 'आजीवन निर्वासन' या किसी कम अवधि के दंड का उपबंध कर भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1898 (1898 का अधिनियम V) द्वारा 1898 में संशोधित किया गया । जहां पूर्व धारा राजद्रोह को विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति अप्रीति की भावना उकसाने या उकसाने का प्रयत्न करने के रूप में परिभाषित करती है वहीं संशोधित धारा को भी विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा या अवमान पैदा करने या पैदा करने का प्रयत्न करने के लिए दंडनीय बनाया गया है ।[19] उपबंध को 1955 के अधिनियम सं. 26 द्वारा दंड को 'आजीवन कारावास और/या जुर्माने से या तीन वर्ष के कारावास और/या जुर्माने से' के रूप में प्रतिस्थापित कर संशोधित किया गया ।

1.16 वेस्ट मिनिस्टर संसद् ने सरकार को उखाड़ फेंकने के मुख्य उद्देश्य से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध होने वाली बैठकों और भारत के कई भागों में राजद्रोह के अपराध करने या विक्षोभ कारित करने के लिए संभाव्य सार्वजनिक बैठकों को निवारित करने के लिए राजद्रोहात्मक बैठक निवारण अधिनियम, 1907 अधिनियमित किया ।

1.17 राजद्रोहात्मक बैठक निवारण अधिनियम, 1911 ने 1907 के अधिनियम को निरसित किया । इसकी धारा 5 ऐसी सार्वजनिक बैठक को रोकने के लिए कानूनी प्राधिकारियों को सक्षम बनाती है यदि ऐसी बैठक से राजद्रोह या अप्रतीति को उकसाने या लोक प्रशांति को अस्तव्यस्त करने की संभावना हो । अधिनियम के उपबंधों के अतिक्रमण को ऐसी अवधि, जिसका विस्तार छह महीने तक हो सकेगा, के कारावास या जुर्माना या दोनों से दंडनीय बनाया गया । 1911 का उक्त अधिनियम निरसन और संशोधनकारी (द्वितीय) अधिनियम (2018 का अधिनियम सं. IV) द्वारा निरसित हो गया ।

---

[16] **क्वीन इम्परर** बनाम **जोगिन्दर चन्दर बोस**, (1892) 19 आई.एल.आर. कल. 35.

[17] डब्ल्यू. और. डोनोघ, राजद्रोह विधि पर संधि और ब्रिटिश पर में सजातीय अपराध 2 (थैकर, स्पिंक ए. कं. कलकत्ता, 1911) http://archive.org/stream/onlawofsedition00dono#page/2/mode/2up पर उपलब्ध (अंतिम बार 16 फरवरी, 2023 को देखा)

[18] वही

[19] के. आई. विभूटे, पी.एस.ए. पिल्लई की आपराधिक विधि, 335 (लेक्सिस नेक्सिस बटरवर्थ, नागपुर, 2012).

2. आयोग की पूर्व रिपोर्ट

2.1 विधि आयोग ने पहले ही 'राजद्रोह' के मुद्दे पर विचार किया है । 'भारतीय दंड संहिता के अधीन आजीवन कारावास का दंड' शीर्षक की अपनी 39वीं रिपोर्ट (1968) में, विधि आयोग ने यह सिफारिश की थी कि राजद्रोह जैसे अपराधों को आजीवन कारावास या कठोर या साधारण कारावास, जो तीन वर्ष तक हो सकेगा, के दंड से दंडनीय बनाया जाना चाहिए, किंतु इससे अधिक नहीं ।[20]

2.2 राजद्रोह के मुद्दे पर 'भारतीय दंड संहिता' शीर्षक वाली अपनी 42वीं रिपोर्ट (1971) में विधि आयोग द्वारा आगे विचार किया गया, जिसमें आयोग ने धारा 124क का समग्र पुनर्विलोकन किया ।[21] विधि आयोग ने सिफारिश की कि :

"6.16 इस अनुच्छेद में वर्णित तत्व, जो राजद्रोह के अपराध के लिए सुसंगत है, भारत की अखंडता, राज्य की सुरक्षा और लोक व्यवस्था हैं । धारा को त्रुटिपूर्ण पाया गया क्योंकि राजद्रोहात्मक कथन के पीछे छिपी 'हानिकर प्रवृत्ति या आशय' का अभिव्यक्तत: संबंध भारत की अखंडता या सुरक्षा या लोक व्यवस्था के हितों से नहीं रहा है । हम महसूस करते है कि इस त्रुटि को 'भारत या किसी राज्य की अखंडता या सुरक्षा को खतरा पहुंचाने या लोक अव्यवस्था कारित करने की संभावना का आशय रखने या जानते हुए' के रूप में आपराधिक मन:स्थिति व्यक्त कर दूर किया जाना चाहिए ।

6.17 राजद्रोह की परिभाषा में पाई गई दूसरी खामी यह है कि यह (क) संविधान, (ख) विधायिका, और (ग) न्याय प्रशासन के प्रति असंतोष को विचार में नहीं लेता क्योंकि यह सभी राज्य की सुरक्षा के लिए उतना ही घातक है, जितना कार्यपालक सरकार के प्रति असंतोष/अन्य संहिताओं में राजद्रोह को परिभाषित करने में । इन पहलुओं पर अन्य संहिताओं में राजद्रोह कोपरिभाषित करने में उचित ही बल दिया गया है और हम महसूस करते हैं कि धारा 124क को उन्हें सम्मिलित करते हुए पुनरीक्षित किया जाए ।

6.18 अपराध के लिए उपबंधित दंड बहुत विषम है । यह आजीवन कारावास या केवल तीन वर्ष तक का कारावास हो सकता है । हमारा विचार है कि विधायिका को सात वर्ष कठोर कारावास और जुर्माने का अधिकतम दंड नियत कर न्यायालयों को अपराध की गंभीरता का दृढ़ संकेत देना चाहिए ।[22]"

2.3 इस प्रकार विधि आयोग ने सिफारिश किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का इस प्रकार पुनरीक्षण किया जाए :

"124क. **राजद्रोह** - जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरुपण द्वारा या अन्यथा सरकार, संविधान भारत की सरकार या संसद् या किसी राज्य की

---

[20] भारत का विधि आयोग, 'भारतीय दंड संहिता के अधीन आजीवन कारावास का दंड', 39वीं रिपोर्ट (जुलाई, 1968).

[21] भारत का विधि आयोग, भारतीय दंड संहिता पर '42वीं रिपोर्ट' (जून, 1971).

[22] वही पृ. 149 पर.

सरकार या विधानसभा या विधि द्वारा स्थापित सरकार या न्याय प्रशासन के प्रति अप्रीति उकसाता हैं या उकसाने का प्रयत्न करता है या यह जानते हुए कि इससे भारत या किसी राज्य की अखंडता या सुरक्षा को खतरा होने की संभावना हैं या लोक अव्यवस्था कारित करता है, को ऐसी अवधि, जो सात वर्ष तक की हो सकेगी, के कठोर कारावास से दंडित किया जाएगा और जुर्माने का भी दायी होगा ।

स्पष्टीकरण 1 : 'अप्रीति' पद के अंतर्गत शत्रुता, घृणा या अवमान की भावनाएं आती हैं ।

स्पष्टीकरण 2 : संविधान के उपबंधों या सरकार की कार्रवाई या संसद् या राज्य विधान सभा के उपायों या न्याय प्रशासन के उपबंधों की अप्रीति उकसाने या उकसाने का प्रयास किए बिना विधिसम्मत साधनों द्वारा उनका परिवर्तन करने की दृष्टि से अननुमोदन व्यक्त करने की टिप्पणी इस धारा के अधीन अपराध गठित नहीं करती ।[23]"

2.4 'राष्ट्रीय सुरक्षा के विरुद्ध अपराध' विषय पर विधि आयोग की 43वीं रिपोर्ट (1971) में भी राष्ट्रीय सुरक्षा विधेयक, 1971 के भाग के रूप में 'राजद्रोह' पर विचार किया गया । इस विधेयक की धारा 39 में 'राजद्रोह' पर विचार किया गया, जो 42वीं रिपोर्ट द्वारा यथा प्रस्तावित पुनरीक्षित धारा की मात्र पुनरावृत्ति थी ।[24]

2.5 विधि आयोग की 'घृणात्मक भाषण' विषय पर 267वीं रिपोर्ट (2017) में यह उपबंध करते हुए 'राजद्रोह' और 'घृणात्मक भाषण' के बीच विभेद किया गया कि घृणात्मक भाषण का अपराध लोक प्रशांति को भंग कर राज्य को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है जबकि राजद्रोह राज्य के विरुद्ध प्रत्यक्षत: एक अपराध हैं ।[25] रिपोर्ट में आगे उल्लेख है कि राजद्रोह के लिए आक्षेपित अभिव्यक्ति भारत की संप्रभुता और अखंडता और राज्य की सुरक्षा को खतरा पहुंचाने वाली होनी चाहिए ।[26]

---

[23] वही

[24] भारत का विधि आयोग 'राष्ट्रीय सुरक्षा के विरुद्ध अपराध', 43वीं रिपोर्ट (अगस्त, 1971).

[25] भारत का विधि आयोग, 'घृणात्मक भाषण पर 267वीं रिपोर्ट' (मार्च, 2017).

[26] वही पृ. 45 पर

3. राजद्रोह पर संविधान सभा बहस

3.1 यद्यपि संविधान में सम्मिलित किए गए अधिकारों को मूलभूत और न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय माना गया । फिर भी संविधान सभा के सदस्यों को अच्छी तरह से महसूस था कि ये अधिकार पूर्ण नहीं हो सकते ।[27] मूल अधिकारों की सीमा को दो मजबूत वकील श्री ए. के. अय्यर और श्री के. एम. मुंशी थे । एक या दो अपवादों के साथ, उनके साथी सदस्यों ने इस प्रयास में अनको सहयोग दिया ।[28] असम और बंगाल तत्कालीन अशांति और पंजाब तथा एन.डब्ल्यू.एफ.पी में सांप्रदायिक दंगों को निर्दिष्ट करने हुए मूल अधिकारों को निर्बंधित करने के अपने मामले की जोरदार बहस करते हुए श्री अय्यर ने श्री बी. एन. राव को भेजे गए एक पत्र में यह टिप्पणी की :

> "भारत ने विभिन्न भागों में हुई हाल की घटनाओं ने मुझे पहले से अधिक यह दृढ़ कर दिया है कि संविधान के अधीन गारंटीकृत सभी मूल अधिकार लोक व्यवस्था, सुरक्षा और रक्षा के अधीन होना चाहिए, यद्यपि ऐसे उपबंध कुछ हद तक संविधान के अधीन गारंटीकृत अधिकारों के प्रभाव को व्यर्थ बना देते हैं ।[29]"

3.2 कभी-कभी कई कतिपय क्वार्टर में यह महसूस किया गया कि राजद्रोह के अपराध संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अतिक्रमण में होने के कारण संविधान के निर्माताओं के व्यक्त आशय के विपरीत हैं । अत:, हमारे लिए संविधान सभा की कार्यवाहियों और उसमें राजद्रोह से संबंधित हुई चर्चाओं पर फिर से विचार करना अनिवार्य है । 24 जनवरी, 1947 को संविधान सभा ने मूल अधिकारों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिए एक सलाहकार समिति सृजित करने के लिए मतदान दिया । सलाहकार समिति के अध्यक्ष श्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने 29 अप्रैल, 1947[30] को 'भारत की संविधान सभा को मूल अधिकारों पर सलाहकार समिति की अंतरिम रिपोर्ट' पेश किया । इस अंतरिम रिपोर्ट का खंड 8(क) वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपबंध करता है । 'राजद्रोहात्मक विषय के प्रकाशन या कथन' वाले इस खंड के परंतुक को वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के निर्बंधन का एक आधार बनाया गया । खंड 8(क) का परंतुक इस प्रकार है :

> (क) प्रत्येक नागरिक का वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार :
>
> .... विधि द्वारा राजद्रोहात्मक, अश्लील, ईशनिंदात्मक अवमान लेख या अपमान वचन या अपमानजनक विषय के प्रकाशन या कथन को अभियोज्य या दंडनीय बनाने के लिए विधि द्वारा उपबंध बनाया जाए ।[31]

---

[27] ग्रैनविले आस्टिन, भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला 68 (क्लैरेन्डन प्रेस आक्सफोर्ड, 1966).

[28] वही पृ. 69 पर

[29] वही पृ. 70 पर

[30] भारत की संविधान सभा को मूल अधिकारों पर सलाहकार समिति की अंतरिम रिपोर्ट, 1947 ; III संविधान सभा बहस, 399 पर.

[31] वही पृ. 7 पर

3.3 अंतरिम रिपोर्ट के खंड 8(क) का पूर्वोक्त उपबंध तारीख 21 फरवरी, 1948 को संविधान सभा के समक्ष प्रस्तुत प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 13(2) के तत्समान है । इस प्रकार प्रारुप संविधान के प्रथम पाठन में राजद्रोह का उपबंध वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकार के एक निर्बंधन के रूप में किया गया । प्रारुप अनुच्छेद 13 का उक्त खंड 2 इस प्रकार है:

(2) इस अनुच्छेद के खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात किसी विद्यमान विधि के क्रियान्वयन को प्रभावित नहीं करेगी या अपमानलेख, अपमान वचन, मानहानि, राजद्रोह या कोई अनय विषय जो शालीनता या नैतिकता को आघात पहुंचाता है या राज्य के प्राधिकार या आधारशिला को क्षीण करता है, से संबंधित कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।

3.4 प्रारुप समिति के अध्यक्ष डा. बी. आर. अम्बेडकर ने प्रारुप संविधान पुर:स्थापित करते हुए मूल अधिकारों की प्रकृति को उजागर किया, जिन्हें भारतीय संविधान में अनुष्ठापित किए जाने थे और वे भी जो यूनाइटेड स्टेट के संविधान में उपबंधित थे । चर्चा के दौरान, डा. अम्बेडकर ने यह प्राख्यान किया कि यू.एस. संविधान के मूल अधिकार पूर्ण नहीं थे और यू. एस. उच्चतम न्यायालय द्वारा समय-समय पर प्रतिपादित विभिन्न सिद्धांतों के आधार पर निर्बंधनों के अधीन थे ।[32] उन्होंने कहा :

डा. बी. आर. अम्बेडकर

...मुझे यह कहते हुए खेद हो रहा है कि मूल अधिकारों के बारे में पूरी आलोचना भ्रामक धारणा पर आधारित है । सर्वप्रथम यह आलोचना जहां तक यह गैर-मूल अधिकारों से मूल अधिकारों के विभेद की मांग करता है, ठोस नहीं है ।यह कहना गलत है कि मूल अधिकार पूर्ण है जबकि गैर-मूल अधिकार पूर्ण नहीं है । दोनों के बीच वास्तविक विभेद यह है कि गैर-मूल अधिकार पक्षकारों के बीच करार द्वारा सृजित होते हैं जबकि मूल अधिकार विधि का उपहार है । क्योंकि मूल अधिकार राज्य का उपहार है, इसका यह अर्थ नहीं कि राज्य उन पर शर्त नहीं लगा सकता ।

दूसरा, यह कहना गलत है कि अमेरिका में मूल अधिकार पूर्ण है । अमेरिकन संविधान और प्रारुप संविधान के अधीन स्थिति के बीच अंतर केवल स्वरूप का है न कि सार का । यह कि अमेरिका में मूल अधिकारों के प्रत्येक अपवाद के समर्थन में कोई भी यूनाइटेड स्टेट उच्चतम नयायालय के कम से कम एक निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता है 1 प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 13 में अंतविष्ट स्वतंत्र भाषण के अधिकार परिसीमा के औचित्य में उच्चतम न्यायालय के एक ऐसे निर्णय को उद्धृत करना पर्यापत होगा । **मिटलो** बनाम **न्यूयार्क** वाले मामले में जिसमें मुद्दा न्यूयार्क की 'आपराधिक अराजकता' विधि की संवैधानिकता का था, जो हिंसा परिवर्तन के बारे में विचारित कथन को दंडित करने के लिए आशयित था । उच्चतम न्यायालय ने कहा :

[32] VII संविधान सभा बहस 40.

"यह काफी समय से स्थापित मूल सिद्धांत है कि भाषण और प्रेस की स्वतंत्रता जिसे संविधान सुरक्षित करता है, उत्तरदायित्व के बिना बोलने या प्रकाशित करने का पूर्ण अधिकार, जो कोई चयन करे या अनिर्बंधित और बेलगाम अनुज्ञप्ति प्रदान नहीं करता, जो भाषा हर संभव उपयोग को छूट देती हो या उनको दंड देने से निवारित करती हो, जो इस स्वतंत्रता का दुरुपयोग करते हों ।"

इसलिए, यह कहना गलत है कि अमेरिका में मूल अधिकार पूर्ण हैं जबकि प्रारुप संविधान में नहीं है ।

....

अमेरिका में, संविधान द्वारा यथा अधिनियमित मूल अधिकार नि:संदेह पूर्ण है । तथापि, कांग्रेस ने शीघ्र ही यह पाया कि इन मूल अधिकारों को सीमाओं द्वारा अर्हित करना पूर्णत: आवश्यक है । जब उच्चतम न्यायालय के समक्ष इन सीमाओं की संवैधानिक के बारे में प्रश्न उठा तो यह दलील दी गई कि संविधान यूनाइटेड स्टेट कांग्रेस को ऐसी सीमाएं अधिरोपित करने की कोई शक्ति प्रदान नहीं करता, उच्चतम न्यायालय ने पुलिस शक्ति के सिद्धांत का आविष्कार किया और इस तर्क से कि प्रत्येक राज्य को अपनी पुलिस शक्ति में ऐसी शक्ति अंतर्निहित है, जिसे संविधान द्वारा इसे व्यक्ततः प्रदत्त किए जाने की अपेक्षा नहीं है, पूर्ण मूल अधिकारों की वकालत करने वालों का खंडन किया । मामले में उच्चतम न्यायालय की भाषा का प्रयोग करते हुए मैंने पहले ही इस प्रकार निर्दिष्ट किया है :

"यह कि राज्य अपनी पुलिस शक्ति के प्रयोग में उन लोगों को दंडित कर सकेगा, जो इस स्वतंत्रता का, लोक कल्याण के प्रतिकूल कथनों द्वारा भ्रष्ट लोक नैतिकता को प्रवृत्त करने द्वारा, अपराध को उकसाने द्वारा भी लोक शांति को भंग करने द्वारा, दुरुपयोग करते हैं, प्रश्नगत नहीं है ।..."

प्रारुप संविधान ने जो किया वह यह है कि पूर्ण निबंधनों में मूल अधिकार विरचित करने और पुलिस शक्ति के सिद्धांत का आविष्कार कर हमारे उच्चतम न्यायालय को संसद् को बचाने के लिए आगे आने पर निर्भर रहने के बजाए, यह राज्य को सीधे मूल अधिकारों पर सीमाएं अधिरोपित करने की अनुज्ञा देता है । वस्तुत: परिणाम में कोई अंतर नहीं है, जो एक प्रत्यक्षत: करता है दूसरा इसे अप्रत्यक्षत: करता है । दोनों मामलों में, मूल अधिकार पूर्ण नहीं है ।

3.5 प्रारुप संविधान के दूसरे वाचन में, संविधान सभा ने पुन: 1 दिसंबर, 1948 को प्रारुप अनुच्छेद 13 पर बहस की ।[33] श्री दामोदर स्वरूप सेठ ने प्रारुप अनुच्छेद को भद्दे ढंग से प्रारुपित किए जाने की आलोचना करते हुए कहा :

"**दामोदर एस. सेठ** : श्रीमान् जी, यह अनुच्छेद 13 वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता शांतिपूर्ण ढंग से और शांति के बिना सभा एकत्रित करने की स्वतंत्रता, भारत के संपूर्ण राज्य

[33] वही पृ. 711 पर.

क्षेत्र में निर्बाध घूमने, किसी भूक्षेत्र में जाने या घर बनाने और संपत्ति अर्जित करते और व्ययन करने और कोई वृत्ति या व्यापार या कारबार करने की स्वतंत्रा की गारंटी देता है । जहां अनुच्छेद इन सभी स्वतंत्रताओं की गारंटी देता है, वही गारंटी किसी विद्यमान विधि के प्रचालन या जनता के सामान्य हित में कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित करने को प्रभावित नहीं करता । श्रीमान् जी, वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी जो इस अनुच्छेद में दी गई है, वस्तुतः अपमानलेख, अपमान वचन, राजद्रोह और कोई अन्य विषय जो राज्य की शालीनता या नैतिकता को क्षीण करते हैं या राज्य के प्राधिकार या आधारशिला को प्रभावित करते हैं, से संबंधित किसी विधि को बनाने से राज्य को निवारित नहीं करती या विद्यमान किसी विधि के प्रचालन को प्रभावित नहीं करती है । अतः, यह स्पष्ट है । श्रीमान् जी, अनुच्छेद 13 में गारंटीकृत अधिकारों को उस धारा द्वारा ही रद्द किया गया है और विधायिका की दया या निरंकुशता के अधीन रखा गया है । ये गारंटियां भी रद्द हो गई । श्रीमान् जी, जब यह कहा गया है कि शालीनता और नैतिकता से संबंधित अपराधों के विरुद्ध और राज्य के प्राधिकार या आधारशिला को क्षीण करते के सुरक्षोपाय के लिए विद्यमान विधि लागू होगी । इसका उपबंध काफी व्यापक निबंधनों में किया गया है । इस प्रकार, जहां कतिपय तरह की स्वतंत्रता को एक ओर अनुज्ञात किया गया है वहीं दूसरी ओर उसी अनुच्छेद द्वारा छीन लिया गया है, जैसा मैंने अभी उल्लेख किया । राज्य के प्राधिकार या आधारशिला को क्षीण करने के विरुद्ध सुरक्षोपाय एक लंबा आदेश है और वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित मूल अधिकार को वस्तुतः अप्रभावी बनाता है । अतः यह स्पष्ट है कि प्रारुप संविधान के अधीन, हम प्रेस की किसी अधिक स्वतंत्रता का उपभोग नहीं करेंगे । जैसा हमने शासित विदेशी सत्ता के अधीन किया और नागरिकों के पास राजद्रोह विधि को अविधिमान्य ठहराए जाने का कोई साधन नहीं होगा, चाहे खुल्लम खुल्ला ऐसी विधि उनके सिविल अधिकारों का अतिक्रमण करती हो । श्रीमान् जी, 'जनता के हित में' पद काफी व्यापक है और विधायिका और कार्यपालिका प्राधिकारी को अपने निजी तरह से कार्य करने में समर्थ बनाएगी । श्रीमान् जी, सर्वेंट आफ इंडिया सोसाइटी के री एस. के. वेज ने बहुत ठीक ही इस अनुच्छेद की आलोचना करते हुए इंगित किया कि यदि सरकार का दुर्भाव साबित नहीं होता है और निश्चित ही उन्हें साबित नहीं किया जा सकता । तब उच्चतम न्यायालय के पास निर्बंधित विधान को कायम रखने के सिवाय कोई विकलप नहीं होगा । श्रीमान् अध्यक्ष जी, प्रारुप संविधान आगे आपातकाल की उद्घोषणा जारी करने को सशक्त करता है, जब कभी वह सोचता है कि भारत की सुरक्षा खतरे में है या युद्ध या घरेलू हिंसा की आशंका द्वारा खतराग्रस्त है । ऐसी परिस्थितियों में राष्ट्रपति को सिविल लिबर्टी रद्द करने की शक्ति है। श्रीमान् जी अब सिविल लिबर्टी को निलंबित करना सैनिक युद्ध की घोषणा के समान है । यूनाइटेड स्टेट में भी, सिविल लिवर्टी को कभी निलंबित नहीं किया जाता है । आक्रमण या विद्रोह के मामलों में जो निलंबित किया जाता है वह केवल बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट है । यद्यपि इस अनुच्छेद में व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुरक्षित रखा गया है, वहीं विधायिका और कार्यपालिका की इच्छा द्वारा निर्बंधित है, जिसके पास किसी संवैधानिक उपबंध द्वारा अनिर्बंधित लगभग उन्मुक्त विधायिका के स्रोत के बीच अध्यादेश जारी करने की शक्तियां   हैं । अतः मूल अधिकारों को पूर्णतः न

केवल विधायिका बल्कि कार्यपालिका की अधिकारिता के बाहर रखा जाना चाहिए । श्रीमान् जी, माननीय डा. अम्बेडकर जी ने सिविल स्वतंत्रताओं पर सीमाओं को उचित ठहराते समय यह उल्लेख किया है कि प्रारुप समिति ने जो किया है वह यह है कि सिविल स्वतंत्रता को पूर्ण निबंधनों में विरचित करने, पुलिस शक्ति के सिद्धांत या मत का आविष्कार करने हेतु उच्चतम न्यायालय की सहायता पर निर्भर रहने के बजाए उन्होंने राज्य को सिविल स्वतंत्रताओं को सीमित करने की प्रत्यक्षत: शक्ति प्रदान की है ।

अब यदि हम यूनाइटेड स्टेट की पुलिस शक्ति की विधि का सावधानीपूर्वक अध्ययन करे तो स्पष्टत: यह देखने में आएगा कि प्रारुप संविधान में समाविष्ट सीमाएं यूनाइटेड स्टेट में उन उपबंधित सीमाओं से काफी व्यापक है । प्रारुप संविधान के अधीन राजद्रोह की विधि, शासकीय गुप्त अधिनियम और कई अन्य विधियों के दमनात्मक प्रकृति को हू-बहू रखा गया है जैसा वे हैं । यदि पुलिस शक्तियों के अधीन पूर्ण सिविल स्वतंत्रता की अनुज्ञा इस देश की जनता के लिए दी जाती है, तो राजद्रोह विधि समेत दमनात्मक प्रकृति की सभी विधियों को समाप्त किया जाए या मूलभूत रूप से परिवर्तित किया जाए और शासकीय गुप्त अधिनियम के भागों को भी समाप्त किया जाए । अब मेरा यह अनुरोध है कि इस अनुच्छेद को मूलभूत रूप से परिवर्तित किया जाए और इसके स्थान पर संलग्नक रखा जाए जैसा मैंने सुझाव दिया है । श्रीमान् जो, मैं आशा करता हूं कि सदन मेरे इस प्रस्ताव पर गंभीरतापूर्वक विचार करेगी । यदि जो कुछ मूल अधिकार हम इस प्रारुप संविधान से पाते हैं, में यहां-वहां छेड़छाड़ होती है और लोगों को पूर्ण सिविल स्वतंत्रता की अनुज्ञा नहीं दी जाती तो, श्रीमान् जी, मेरा निवेदन है कि मूल अधिकारों का वरदान अब भी हमारी पहुंच से परे है और इस संविधान को बनाने का इस देश के लिए मूल्यहीन साबित होगा ।[34]"

3.6 श्री महबूब अली बेग साहिब बहादुर ने प्रारुप अनुच्छेद 13 से खंड (2) से (6) हटाने के लिए संशोधन लाने और खंड (1) में एक परंतुक जोड़ने का प्रस्ताव किया, जो इस प्रकार है, 'परंतु यह कि उक्त अधिकार के प्रयोग में कोई नागरिक राज्य की सुरक्षा को खतरा नहीं पहुंचाएगा, समुदायों के बीच वैमनस्य नहीं फैलाएगा और देश की शांति और प्रशांति को अस्त-व्यस्त करने के लिए कोई कार्य नहीं करेगा ।'[35] इस संशोधन को पुर:स्थापित करते हुए उन्होंने कहा :

"**महबूब अली बेग साहिब बहादुर** : श्री उप-सभापित महोदय, मुझे ऐसा लगता है कि मूल अधिकार खंड (2) से (6) के अधीन वंचित करने हुए केवल खंड (1) में सूचीबद्ध है, क्योंकि पहली बात, ये मूल अधिकार विद्यमान विधियों के अधीन है । यदि भूतकाल में प्रवृत्त विधियां, विधि विहीन विधियां जैसा हम उन्हें पुकारेंगे दमनात्मक विधियां या ऐसी विधियां जिसका अधिनियमन नागरिकों के उनके मानवीय अधिकारों से वंचित करने के लिए किया गया था । यदि वे खंड (2) से (6) के उपबंधों के अधीन नागरिकों को इन अधिकारों से वंचित करते है तो

[34] वही पृ. 712-13 पर.

[35] वही पृ. 725 पर.

ऐसा करते रहेंगे । ऐसी विधियां जिन्हें मैं दंड विधि संशोधन अधिनियम, प्रेस अधिनियम और कई सुरक्षा अधिनियम, जो प्रांतों में अधिनियमित किए गए हैं, के रूप में निर्दिष्ट कर सकता हूं । और इन खंड (2) से (6) में आगे यह उल्लेख है यदि विद्यमान विधियां कठोर, दमनात्मक और इन अधिकारों का विनाश करने के लिए पर्याप्त नहीं है तो अनुच्छेद 7 में यथा परिभाषित राज्य जिसके अंतर्गत विधायिका, कार्यपालिका, सरकार और स्थानीय निकाय भी आते हैं, बल्कि स्थानीय प्राधिकारी भी तबाही को पूरा कर सकते हैं । मैं अतिशयोक्ति या अतिरंजित कथन नहीं कर रहा हूं । मैं अब यह दर्शित करना चाहता हूं कि यह आलोचना करने में भावना या अतिशयोक्ति का कोई सूक्ष्म कण भी नहीं है । मूल अधिकार मौलिक, स्थायी, पवित्र हैं और कार्यपालिका और विधायिका की अधिकारिता को अपवर्जित कर राज्य की दमनात्मक शक्तियों के विरुद्ध गारंटीकृत होना चाहिए ।यदि कार्यपालिका और विधायिका की अधिकारिता को अपवर्जित नहीं किया जाता है, तो ये मूल अधिकार सामान्य अधिकार होकर रह जाएंगे और मौलिक नहीं रह जाएंगे । यह मूल अधिकार का आशय और महत्व है ।"[36]

3.7 इन्हीं चिंताओं के बीच, श्री के. एम. मुंशी ने प्रारुप अनुच्छेद 13 के खंड (2) के लिए एक संशोधन प्रस्तावित किया । उक्त संशोधन इस प्रकार है :

"(2) इस अनुच्छेद के खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात किसी विद्यमान विधि के क्रियान्वयन को प्रभावित नहीं करेगी या अपमान लेख, अपमान वचन, मानहानि या कोई अन्य विषय, जो शालीनता या नैतिकता को आघात पहुंचाते हैं या राज्य के प्राधिकार या आधारशिला को क्षीण करते हैं, से संबंधित कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।[37]"

3.8 इस संशोधन के माध्यम से, श्री के. एम. मुंशी ने 'राजद्रोह' शब्द का लोप कराना और इसे 'जो राज्य की सुरक्षा को क्षीण करता है या राज्य को उखाड़ फेंकने की प्रवृत्ति रखता है' के स्थान पर रखना चाहा । उन्होंने कहा कि संशोधन का उद्देश्य 'राजद्रोह' शब्द को हटाना था, जो राज्य के विरुद्ध अपराध का सार गठित करता है । इस प्रकार, निरापद रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह संशोधन पुर:स्थापित करते हुए, श्री मुंशी ने धारा 124क के उद्भव और न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों के प्रति व्यक्तत: सचेत थे जो धारा 124क की परिधि को कम करते थे । वर्तमान चर्चा के लिए श्री मुंशी द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों को हू-ब-हू उद्धृत करना सुसंगत है :

"**के. एस. मुंशी** : महोदय, इस संशोधन का महत्व यह है कि यह 'राजद्रोह' शब्द को हटाने का प्रयास करता है और एक बेहतर वाक्यांश का उपयोग करता है, जैसे 'जो राज्य की सुरक्षा को कमजोर करता है या उखाड़ फेंकने की प्रवृत्ति रखता है ।' उद्देश्य 'राजद्रोह' शब्द को हटाना है, जो संदिग्ध और अलग-अलग महत्व का है और ऐसे शब्दों को पेश करना है, जिनहें अब राज्य के खिलाफ अपराध का सार माना जाता है ।

---

[36] वही पृ. 728 पर.

[37] वही पृ. 731 पर.

....

मैं इस बात की ओर इशारा कर रहा था कि 'राजद्रोह' अलग-अलग अर्थ का शब्द रहा है और इससे न केवल इस सदन के सदस्यों के मन में बल्कि दुनिया भर के न्यायालयों के मन में काफी संदेह पैदा किया है । इसकी परिभाषा बहुत सरल है और 1968 तक दी गई है । इसमें कहा गया है कि 'राजद्रोह उन सभी प्रथाओं को गले लगाता है चाहे शब्द या कार्य या लिखित रूप से जो राज्य की शांति भंग करने के लिए माना जाता है और अज्ञानी व्यक्तियों को सरकार को गिराने के लिए प्रेरित करती है ।' लेकिन व्यवहार में इसका एक जिज्ञासु भाग्य रहा है । डेढ़ सौ साल पहले इंग्लैंड में सभा करना या जुलूस निकालना राजद्रोह माना जाता था । यहां तक कि सरकार के प्रति दुर्भावना पैदा करने वाली राय रखना भी कभी राजद्रोह माना जाता था । दंड संहिता की हमारी कुख्यात धारा 124क को कभी-कभी इतना व्यापक रूप से समझा जाता था कि मुझे याद है कि एक मामले में एक जिला मजिस्ट्रेट की आलोचना को धारा 124क के अधीन समाविष्ट करने का आग्रह किया गया था लेकिन जनता की राय तब से और अब काफी बदल गई है जब हमारे पास एक लोकतांत्रिक सरकार है, हमें सरकारी आलोचना जो स्वागत योग्य है और जो ऐसा उद्दीपन जो ऐसी सुरक्षा व्यवस्था को क्षीण करता है जिस पर सभ्य जीवन आधारित है या जो राज्य को उखाड़ फेंकने के लिए विचारित है, के बीच एक रेखा खींची जानी चाहिए । अत: 'राजद्रोह' शब्द का लोप किया गया है । वास्तव में लोकतंत्र का सार सरकार की आलोचना है । दलीय व्यवस्था, जिसमें आवश्यक रूप से एक सरकार को दूसरी सरकार द्वारा बदलने की वकालत शामिल है, इसका एकमात्र बचाव है । सरकार की एक अलग प्रणाली की वकालत का स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि यह लोकतंत्र को जीवनशक्ति देता है । अत:, इस संशोधन का उद्देश्य दो स्थितियों के बीच अंतर करना है । **निहारेन्दु दत्त मजूमदार** बनाम **किंग** वाले मामले में हमारे फेडरल न्यायालय ने भी III और IV फेडरल न्यायालय की रिपोर्ट में, भारतीय दंड संहिता लागू होने पर 'राजद्रोह' का अर्थ और 1942 में समझे जाने वाले 'राजद्रोह' के बीच अंतर किया है । भारत के मुख्य न्यायाधीश के निर्णय के एक पैरा से यह स्थिति स्पष्ट हो जाएगी कि वर्तमान में राज्य के खिलाफ अपराध क्या है । यह पृष्ठ 50 पर कहता है :

'इसे (राजद्रोह) सरकारों के आहत घमंड की सेवा करने के लिए अपराध नहीं बनाया गया है लेकिन क्योंकि जहां सरकार और कानून का पालन होना बंद हो जाता है क्योंकि उनके लिए कोई सम्मान महसूस नहीं किया जाता, वहां केवल अराजकता फैल जाती है । सार्वजनिक अव्यवस्था या उचित प्रत्याशा या सार्वजनिक अव्यवस्था की संभावना इस प्रकार अपराध का सार है, जिन कार्यों या शब्दों की शिकायत की गई है, का प्रयोग अव्यवस्था को उकसाने में होना चाहिए या ऐसा होना चाहिए जो युक्तिसंगत व्यक्तियों को इस प्रकार संतुष्ट करते हों कि यह उनका इरादा या प्रवृत्ति है ।'

इसलिए, यह संशोधन उन शब्दों का प्रयोग करता चाहता है, जो लोकतंत्र में वर्तमान पीढ़ी द्वारा समझे गए 'राजद्रोह' शब्द के निहितार्थ का ठीक से उत्तर देते हैं । इसलिए, कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ; केवल अस्पष्ट शब्द 'राजद्रोह' को अनुच्छेद से हटाने की मांग की गई है

। अन्यथा एक गलत धारणा बनेगी कि हम भारतीय दंड संहिता की धारा 124क या इसके अर्थ को कायम रखना चाहते हैं, जिसे पहले दिनों में अच्छा कानून माना जाता था, महोदय, इन्हीं शब्दों के साथ मैं यह संशोधन पेश करता हूं ।"[38]

3.9 इस प्रकार, बहस को बारीकी से पढ़ने से स्पष्ट चित्र निखरता है कि प्रारुप अनुच्देद के खंड (2) से 'राजद्रोह' शब्द के हटाने के पीछे तर्काधार यह था कि संविधान निर्माता ऐसे शब्दों का प्रयोग करना चाहते थे, जिनका उनकी समझ से **निहारेन्दु दत्त मजूमबदार** बनाम **किंग**[39] वाले मामले में फेडरल नयायालय द्वारा दिए गए इसके सही निर्वचन के अनुसार राजद्रोह के अपराध का अर्थ उचित रूप से निकाला गया था । 'राजद्रोह' शब्द को मात्र हटाना वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अधिरोपित किए जाने के लिए ईप्सित युक्तियुक्त निर्बंधनों में कोई ठोस परिवर्तन नहीं लाएगा । अनुच्छेद 19(2) से 'राजद्रोह' पद का लोप किया गया क्योंकि संविधान निर्माताओं ने और अधिक व्यापक अभिप्राय वाले पदों को सम्मिलित किया, जो ऐसे अन्य विध्वंसक क्रियाकलापों के साथ राजद्रोह के अपराध को भी शामिल करते थे, जो राज्य की सुरक्षा के लिए हानिकर थे 1 2 दिसंबर, 1948 को श्री मुंशी जी के संशोधन को संविधान सभा द्वारा अंगीकृत किया गया । यह प्रारुप अनुच्छेद 13 ने अंततः संविधान के अनुच्छेद 19 के रूप में मूर्त रूप प्राप्त किया ।

4. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का न्यायिक निर्वचन

क. स्वतंत्रता के पूर्व राजद्रोह पर न्यायिक निर्वचन

[38] वही

[39] 38 एफ.सी.आर. [1942].

4.1 स्वतंत्रता के पूर्व, ब्रिटिश द्वारा धारा 124**क** का व्यापक उपयोग भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को कुचलने के लिए किया गया । **जोगेन्द्र चन्दर बोस** वाले[40]मामले में, अभियुक्त पर सहमति विधेयक की आयु और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के नकारात्मक आर्थिक प्रभाव की आलोचना करते के लिए राजद्रोह का आरोप लगाया गया । मामले को जूरी को निर्देश करते समय, न्यायालय ने उस समय की इंग्लिश विधि के अधीन समझे जाने वाले राजद्रोह को भारतीय दंड संहिता की धारा 124क से विभेदित किया । यह मत व्यक्त किया गया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन अनुबंधित अपराध लघुतर (न्यून) है, क्योंकि इंग्लैंड में किसी राजद्रोहात्मक भावना के परिणामस्वरूप किसी प्रकट कार्य को दंडित किया जाता था जबकि भारत में केवल वे कार्य जो 'बल द्वारा प्रतिरोध या बल द्वारा प्रतिरोध प्रदीप्त करने का प्रयास करने के आशय' के साथ किए जाने थे, इस धारा के अधीन आते थे ।

4.2 यह मत व्यक्त किया गया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन अप्रीति को दंडित किया जाए न कि अननुमोदन को । अप्रीति को प्रीति के प्रतिकूल भावना के रूप में परिभाषित किया गया, क्योंकि नापसंदगी या घृणा और अननुमोदन मात्र अस्वीकृति है । भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन 'अप्रीति' पद का निर्वचन निम्न प्रकार से किया गया :-

> "यदि कोई व्यक्ति सोच-समझकर ऐसे लोगों के मस्तिष्क में ऐसे बोले गए या लिखित शब्दों का प्रयोग करता है जिन्हें सरकार के विधिपूर्ण प्राधिकार की आज्ञा न मानने की स्थिति के लिए संबोधित किया जाता है या उस प्राधिकार को नष्ट करना या विमुख करता है जब कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो और यदि वह अपने सुनने वालों या पाठकों में ऐसी स्थिति पैदा करने के आशय से ऐसा करता है तो वह धारा के अर्थान्तर्गत अप्रीति प्रदीप्त करने का प्रयास करने के अपराध का दोषी होगा, यद्यपि उसके शब्दों से कोई अस्त-व्यस्तता या वस्तुत: उनके द्वारा कोई अप्रीति की भाव नहीं हुई ।"

कोई अधिमत नहीं दिया गया क्योंकि जूरी का सर्वसम्मत से विनिश्चय नहीं हुआ । बाद में, बोस द्वारा क्षमा मांगने के पश्चात् मामला वापस ले लिया गया ।[41]

4.3 **क्वीन इम्प्रेस** बनाम **बाल गंगाधर तिलक**[42] वाले मामले में प्रतिवादी भारत में ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेकने को उकसाने के लिए मराठा योद्धा छत्रपति शिवाजी का उदाहरण देकर केसरी समाचार पत्र में एक लेख प्रकाशित करते के लिए राजद्रोह का अभियुक्त था । इस मामले में, न्यायमूर्ति स्ट्रेची ने निम्नलिखित कहते हुए 'अप्रीति' का निर्वचन करने के लिए जूरी के समक्ष सुसंगत सामग्री रखी :-

> "इसका अभिप्राय सरकार के प्रति घृणा, शत्रुता, नापसंदगी, विद्रोह, अवमान और हर प्रकार का दुर्भाव है । 'अनिष्ठा' संभवत: सरकार के प्रति सभी प्रकार की बुरी भावना को मिलाते हुए

[40] **क्वीन इम्प्रेस बनाम जोगिन्दर चन्दर बोस** (1892) 19 आई. एल. आर. कल. 35.

[41] वही

[42] आई. एल. आर. (1898) 22 बाम्बे 112.

सबसे अच्छा सामान्य पद है । ऐसा ही विधि अप्रीति का अर्थ निकालती है, जिसे व्यक्ति चाहे उकसाने या उकसाने का प्रयास न करे ; वह सरकार के प्रति किसी तरह की दुश्मनी का अनुभव कराए या अन्य लोगों को दुश्मनी की भावना कराने का प्रयास न करे ..... अप्रीति की मात्रा या गहनता महत्वहीन है .... यदि व्यक्ति ज्यादा या कम अप्रीति की भावना प्रदीप्त क्रता है या प्रदीप्त करने का प्रयास करता है तो वह धारा के अधीन दोषी है । दूसरा यह बिल्कुल महत्वहीन है कि क्या प्रश्नगत प्रकाशन से अप्रीति की किसी भावना को प्रदीप्त किया गया है या नहीं ..... धारा अप्रीति की भावना के सफल प्रदीप्तन और उसके प्रदीप्तन के असफल प्रयास को बिल्कुल एक ही धरातल पर रखती है ....।"

4.4 न्यायालय द्वारा उस निर्वचन को अभिव्यक्त रूप से अस्वीकार किया गया कि केवल ऐसे कार्य जो विद्रोह पैदा करते हैं या सरकार के प्रति बलात प्रतिरोध करते हैं, इस धारा के अधीन किया जाना चाहिए ।[43] इस निर्णय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के 1989 संशोधन को प्रभावित किया, जिसमें जोड़ा गया स्पष्टीकरण अप्रीति को अभक्ति और शत्रुता की भावना सम्मिलित करते हुए परिभाषित करता है ।[44]

4.5 **बाल गंगाधर तिलक** वाले निर्णय के अनुसरण में दो महत्वपूर्ण विनिश्चय **क्वीन इम्प्रेस** बनाम **रामचन्द्र नारायण**[45] और **क्वीन इम्प्रेस** बनाम **अम्बा प्रसाद**[46] किए गए । **रामचन्द्र नारायण** वाले मामले में, सरकार के प्रति अप्रीति की भावना उकसाने के प्रयास को 'विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा पैदा करने का प्रयास करते, राजनैतिक असंतोष पैदा करने और लोगों को उनकी निष्ठा से दूर करने के समतुल्य' के रूप में परिभाषित किया गया ।[47] तथापि, यह स्पष्ट किया गया कि सरकार की नापसंदगी का प्रत्येक कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 124**क** के अधीन अप्रीति की कोटि में नहीं आता, बशर्ते इस धारा के अधीन अभियुक्त व्यक्ति हृदय से निष्ठावान है और 'सरकार की आज्ञा मानने और सहयोग करने के लिए तैयार' है ।[48]

4.6 **अम्बा प्रसाद** वाले मामले में भी अननुमोदन का ऐसा ही निर्वचन किया गया, जिसमें अभियुक्त को जमी-उल-उलाम नामक समाचार पत्र में एक लेख प्रकाशित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 124**क** के अधीन आरोपित किया गया था । अप्रीति के अर्थ का विश्लेषण करने के पश्चात्, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि कोई अननुमोदन तभी वाक् स्वतंत्र्य के रूप में संरक्षित होगा यदि उससे राज्य के विधिपूर्ण प्राधिकार के प्रति अनिष्ठा या नष्ट करने की बात उभर कर नहीं आती । न्यायालय ने यह उल्लेख किया :-

---

[43] के. आई. विभूते, पी.एस.ए., पिल्लई की आपराधिक विधि 335 (लेक्सिस नेक्सिस वटरवर्थ, नागपुर, 2012).

[44] 77 इंग्लिश रिपोर्ट 250 (के.बी. 1606).

[45] आई. एल. आर. 1998 22 बाम्बे 152.

[46] आई. एल. आर. (1997) 20 इला. 55.

[47] वही

[48] **क्वीन इम्प्रेस** बनाम **रामचन्द्र नारायण, आई. एल. आर.** 1898 22 बाम्बे 152.

"…..अननुमोदन सरकार को समाप्त करने या प्रतिरोध करते के अविधिपूर्ण प्रयासों के विरुद्ध सरकार के विधिपूर्ण प्राधिकार के प्रति निष्ठा रखने और उस विधिपूर्ण प्राधिकार का सहयोग देने की स्थिति से 'संगत' होना चाहिए ।"

4.7 भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का शाब्दिक निर्वचन करते हुए न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि यह आवश्यक नहीं है कि प्रश्नगत कार्य से वास्तविक विद्रोह या विप्लव या सरकार का बलात प्रतिरोध या किसी तरह का वास्तविक विक्षोभ कारित हुआ हों ।[49] इस बिंदु पर बल देते हुए न्यायालय ने यह उल्लेख किया :-

"(राजद्रोह) दोष की कसौटी के रूप में कतिपय भावनाओं को उकसाना या उकसाने का प्रयास करना और विद्रोह या बलात प्रतिरोध जैसी किसी कार्रवाई को प्रेरित करना या प्रेरित करते का प्रयास करना नहीं है ।[50]"

4.8 इन मामलों ने अप्रीति पद का निर्वचन करने में स्पष्टीकरण द्वारा पैदा हुई संदिग्धता को प्रकाश में लाया । धारा 124क का निर्वचन करते में आगे किसी गलत अवधारणा को दूर करने के लिए, विधायिका ने धारा में स्पष्टीकरण ।।। सम्मिलित करने जिसमें 'सरकार की कार्रवाई के अननुमोदन को व्यक्त करने वाली किंतु धारा के अधीन कोई अपराध करने का आशय न रखने टिप्पणी को अपवर्जित किया । एक और स्पष्टीकरण जोड़ने के पीछे आशय विधि को और सारगर्भित बनाना था । राजद्रोह विधि पर विचार करते हुए चयन समिति ने निम्नलिखित शब्दों में इस परिवर्धन को स्पष्ट किया :-

"हमने धारा 124क में एक और स्पष्टीकरण जोड़ा । दूसरे स्पष्टीकरण का आशय उचित और ईमानदार आलोचना को संरक्षित करना था जिसका उद्देश्य किसी विशिष्ट मामले में सरकार द्वारा अपनाई गई नीति को परिवर्तित करता था । कुछ लोग आशंकित थे कि इस सिद्धांत की व्यक्त घोषणा विधित: सरकारी कार्रवाई की आलोचना करने वाले लोगों के अधिकार पर नकारात्मक प्रभाव डालेगी जबकि उस आलोचना से ऐसी कार्रवाई का प्रत्यावर्तन नहीं हों सकता ; उदाहरणार्थ, पिछले व्यय की आलोचना या ऐसी नियुक्ति की आलोचना जिसे आलोचक आपत्तिजनक सोचते हैं । मैं सोचता हूं कि यह आशंका बिल्कुल निराधार है किंतु इसे शांत करने के लिए हमने तीसरा स्पष्टीकरण सम्मिलत किया ।[51]"

4.9 चयन समिति की चर्चा से यह उपदर्शित होता है कि ब्रिटिश सरकार भारतीयों को उतनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करने की इच्छुक नहीं थी जितना इंग्लैंड में लोगों को था । ब्रिटिश ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह भू-भाग विदेशी शासन के अधीन था और इस भू-भाग

---

49 वही

50 वही

51 के. आई. विभूते, पी.एस.ए. पिल्लई की आपराधिक विधि 65 (लेक्सिस लेक्सिस वटरवर्थ, नागपुर, 2012).

में भिन्न-भिन्न रुढ़ियों और विरोधी मतों वाली कई नस्लों के लोग रहते हैं, हिंसा के प्रत्यक्ष प्रदीपन या विद्रोह कर राजद्रोह की व्याप्ति को सीमित करना कठिन पाया ।[52]

4.10 जहां ब्रिटिश सरकार राजद्रोह की विधि की परिधि को बढ़ाने को न्यायोचित ठहरा रही थी, वहीं न्यायालय ने **कमल कृष्ण सरकार** बनाम **इम्परर**[53] वाले मामले में ऐसे भाषण को राजद्रोहात्मक ठहराने से इनकार किया जिसमें कम्यूनिस्ट पार्टी आफ इंडिया और विभिन्न व्यापार संघों और श्रम संगठनों का अवैध घोषित करते हुए सरकारी विधान की निन्दा की गई थी । न्यायालय द्वारा यह राय दी गई कि इस तरह के भाषण को राजद्रोहात्मक आशय से लांछित करना भारत में वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को पूरी तरह से दबाना होगा । यह मत व्यक्त किया गया कि :-

> "आवश्यक नहीं कि सरकार के किसी अन्य रूप का सुझाव देना वर्तमान सरकार के प्रति घृणा या अवमान हो .....। उसका यह अर्थ नहीं कि कोई इस तरह का भाषण न दे । हम कई बातों को जो लोग लगातार रोजाना कर रहे हैं बिल्कुल पसंद नहीं करते । यह सुझाव देने का कोई कारण नहीं है कि ऐसे लोग राजद्रोह या सरकार के प्रति घृणा या अवमान करते का प्रयास करते के दोषी हैं ।"

4.11 पूर्वोक्त मामला किसी तरह की आलोचना को दबाने के लिए राजद्रोह का उपयोग करने की ब्रिटिश सरकार की प्रवृत्ति को प्रतिबिम्बित करता है । **निहारेन्दु दत्त मजूमदार** बनाम **द किंग इम्परर**[54] वाले मामले में न्यायालय **बाल गंगाधर तिलक** वाले मामले में धारा 124क पर दिए गए शाब्दिक निर्वचन से विपथित हुआ । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि राजद्रोह के अपराध का संबंध लोक व्यवस्था के बिखराव और अराजकता के निवारण से है और जब तक भाषण से लोक अव्यवस्था नहीं होती या युक्तियुक्त आशंका या इसकी संभावना न हो, इसे राजद्रोहात्मक नहीं कहा जा सकता ।[55] इस प्रकार **बाल गंगाधर तिलक** वाले मामले के बचाव तर्क के सार की पुष्टि हुई । परिणामत:, फेडरल न्यायालय द्वारा यह राय देते हुए अपीलार्थी को दोषमुक्त किया गया कि सभी अप्रिय शब्दों को 'कार्रवाईयोग्य' नहीं माना जा सकता ।

4.12 बाद में, **किंग इम्परर** बनाम **सदाशिव नारायण भालेराव**[56] वाले मामले में इस परिभाषा को उलट दिया गया । इस मामले में, निहारेन्दु दत्त मजुमदार वाले मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के 'लोक व्यवस्था' के पठन को स्वीकार नहीं किया गया और **बाल गंगाधर तिलक** और बाद में **रामचन्द्र नारायण** और **अम्बा प्रसाद** वाले मामले के शाब्दिक निर्वचन को कायम रखा गया।

ख. संविधान के अधिनियमन के पश्चात् राजद्रोह पर न्यायिक विनिश्चय

---

[52] वही पृ. 66 पर.

[53] ए.आई.आर. 1935 कल. 636.

[54] ए. आई. आर. 1942 एफ. सी. 22

[55] वही

[56] ए. आई. आर. 1947 पी.सी. 84.

1. केदार नाथ सिंह वाले मामले के निर्णय के पूर्व राजद्रोह पर निर्णय

4.13 स्वतंत्रता के पश्चात्, यद्यपि **रोमेश थापर** बनाम **मद्रास राज्य**[57] और **बृजभूषण** बनाम **दिल्ली राज्य**[58] वाले मामलों में कई मताभिव्यक्तियां दी गई किंतु 1962 तक उच्चतम न्यायालय के समक्ष धारा 124क की संवैधानिकता का प्रश्न प्रत्यक्षत: उत्पन्न नहीं हुआ । **रोमेश थापर** और **बृजभूषण** दोनों मामलों में निर्णय एक ही दिन दिए गए । **रोमेश थापर** वाले मामले में बहुमत ने यह अभिनिर्धारित किया कि जब तक वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को निर्बंधित करने वाली विधि प्रत्यक्षत: राज्य की सुरक्षा को नष्ट करने या इसे उखाड़ फेंकने के विरुद्ध नहीं है तब तक इसे निर्बंधित करते वाली ऐसी कोई विधि अनुच्छेद 19(2) के अधीन आरक्षण के भीतर नहीं आती ।

4.14 **बृजभूषण** वाले मामले के इसी बहुमत ने **रोमेश थापर** वाले मामले के विनिश्चय का अवलंब लिया और मद्रास लोक व्यवस्था अनुरक्षण अधिनियम, 1949 की उस धारा 9(1-क) को अभिखंडित किया, जो लोक सुरक्षा या लोक व्यवस्था के अनुरक्षण के प्रतिकूल किसी क्रियाकलाप को निवारित करते या लड़ने के लिए वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर निर्बंधन अधिरोपित करना प्राधिकृत करती थी । बहुमत ने अभिनिर्धारित किया कि आक्षेपित उपबंध संविधान के अनुच्छेद 19 के खंड (2) द्वारा विधायिका को प्रदत्त शक्ति के आधिक्य में थे । तथापि, न्यायमूर्ति फजल अली ने इन दोनों मामलों में विसम्मत राय व्यक्त करते हुए राजद्रोह विधि की प्रकृति और व्याप्ति पर विचार किया और संविधान के अनुच्छेद 19(2) में 'राजद्रोह' पद को सम्मिलित न करने का तर्क दिया । स्टीफन की क्रिमिनल ला आफ इंग्लैंड को उद्धृत करते हुए, न्यायमूर्ति फजल अली ने यह अभिनिर्धारित किया :-

> "इस पैराग्राफ में दो विषयों को बहुत स्पष्ट किया गया है । सर्वप्रथम यह दर्शित करता है कि राजद्रोह निश्चय ही लोक प्रशांति के विरुद्ध एक अपराध है और दूसरा यह कि मोटे तौर पर लोक प्रशांति के विरुद्ध दो तरह के अपराध है : (क) अव्यवस्था सहित हिंसा के साथ होते है, जो लोगों की पर्याप्त संख्या या काफी स्थानीय क्षेत्र की प्रशांति को प्रभावित करता है और (ख) वे जो हिंसा के साथ ही नहीं किए जाते किंतु राजद्रोहात्मक उद्गार, राजद्रोहात्मक षड्यंत्र आदि जैसे बर्ताव कारित करते का आशय रखते हैं । इन दोनों वर्गों के अपराध ऐसे हैं जो राज्य की सुरक्षा को खतरे में डालेंगे या इसे उखाड़ फेंकना चाहेंगे यदि इसे बेरोक-टोक छोड़ दिया जाए और जैसा कि मैंने इंगित करने का प्रयास किया कि इस मत के पक्ष में प्राधिकृत मत व्यक्त करना अच्छा कि राजद्रोह करने की गुरुता इस तथ्य के कारण है कि यह राज्य की प्रशांति और सुरक्षा को गंभीरता से प्रभावित करता है । **सिद्धांतत:, तो अनुच्छेद 19 के खंड (2) में राजद्रोह को निर्दिष्ट करना तर्कसंगत नहीं रहा होगा और ऐसे विषयों का लोप** करता है, जो कम गंभीर है और जो राज्य की सुरक्षा को नष्ट करने की समान संभावना रखते हैं । यह प्रतीत होता है कि संविधान निर्माताओं ने तार्किक अनुक्रम अपनाना ठीक समझा और अधिक सामान्य और

---

[57] ए. आई. आर. 1950 एस. सी. 124.

[58] ए. आई. आर. 1950 एस. सी. 129.

आधारभूत शब्दों का प्रयोग किया जो राजद्रोह और अन्य विषय, जो राजद्रोह के रूप में राज्य की सुरक्षा के लिए हानिकर हैं, को समाविष्ट करने में सक्षम हैं ।[59]"

इस प्रकार, न्यायमूर्ति फजल अली ने अभिनिर्धारित किया कि राजद्रोह के आपराध में विभिन्न मात्रा की गुरुता हैं । उनके अनुसार संविधान निर्माताओं का आशय अनुच्छेद 19(2) से 'राजद्रोह' के लोप का तर्क ऐसे व्यापक अभिप्राय के पदों को सम्मिलित करना था, जो अन्य क्रियाकलाप, जो राजद्रोह के रूप में राज्य की सुरक्षा के लिए हानिकर है, के साथ-साथ राजद्रोह के क्रियाकलाप को भी सम्मिलित करता हो ।

4.15 **तारा सिंह गोपीचन्द** बनाम **राज्य**[60] वाले मामले में पंजाब उच्च न्यायालय ने यह तर्क देते हुए **रोमेश थापर** वाले मामले के बहुमत राय का अवलंब लेते हुए धारा 124क को असंवैधानिक घोषित किया कि यह संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन गारंटीकृत वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन करता है । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :-

> "यह सही है कि संविधान निर्माताओं ने ऐसी सीमाओं को स्वीकार नहीं किया, जो फेडरल न्यायालय अभिकथित करने की इच्छा रखते थे । यह हो सकता हैं कि वे इतनी दूरी तक जाना उचित नहीं समझते थे । तथापि, वाक् स्वतंत्र्य के हस्तक्षेप पर अनुच्छेद 19 के खंड (2) द्वारा रखी गई सीमा वास्तविक और सारवान है । बुरी भावना उकसाने का असफल प्रयास धारा 124क की परिधि के भीतर एक अपराध है । कुछ दृष्टांतों में कम से कम असफल प्रयास राज्य को दुर्बल ही करेगा या उखाड़ फेकने की प्रवृत्ति नहीं करेगा । यह पर्याप्त है यदि संविधान द्वारा अनुज्ञा न दी गई रीति से वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कम करने के लिए धारा का संभव उपयोग का एक दृष्टांत प्रतीत होता हैं ।"

4.16 संसद् ने संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा अनुच्छेद 19 के खंड (2) को संशोधित किया और 'विदेशी राज्य के साथ मंत्रीपूर्ण संबंध' और 'लोक व्यवस्था' नामक दो अतिरिक्त निर्बंधन अंत:स्थापित किया । संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951 के उद्देश्यों और कारणों का कथन इस प्रकार है :

> "संविधान के पिछले पंद्रह महीनों के कार्यकरण के दौरान, विशेषकर मूल अधिकार के अध्याय के संबंध में न्यायिक विनिश्चयों और निर्णयों द्वारा कतिपय कठिनाइयां प्रकाश में आई । अनुच्छेद 19(1)(क) द्वारा गारंटीकृत वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नागरिक के अधिकार को कुछ न्यायालयों द्वारा इतना समग्र होता अभिनिर्धारित किया गया जिससे कि व्यक्ति को अपराधी नहीं ठहराया जाए चाहे वह हत्या और हिंसा अन्य अपराधों की वकालत करता हो ।"

---

[59] वही पृ. 133 पर.

[60] ए. आई. आर. 1951 पंजाब 27.

इस प्रकार, संसद् ने **रोमेश थापर** वाले मामले के बहुमत के तर्क पर ध्यान दिया जिसने यह अभिनिर्धारित किया था कि वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को राष्ट्रीय सुरक्षा के खतरे और लोक अव्यवस्था के गंभीर रूप, जो राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा पहुंचाते है, के आधार पर निर्बंधित किया जा सकता है न कि विशुद्धत: स्थानीय महत्व के छोटे शांतिभंग के मामलों में । संशोधन **बृजभूषण**[61] वाले मामले में न्यायमूर्ति फजल अली के विसम्मत राय में यथा अधिकथित विधि के कथन को प्रतिध्वनित करता है ।

4.17 संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951 के अधिनियमन के पश्चात्, पटना उच्च न्यायालय ने **देवी सोरेन** बनाम **बिहार राज्य**[62] वाले मामले में धारा 124क की विधिमान्यता पर विचार किया । इसकी विधिमान्यता को कायम रखते हुए उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर युक्तियुक्त निर्बंधन के रूप में 'लोक व्यवस्था के हित में' के जोड़े जाने के पश्चात् अनुच्छेद 19(2) की व्याप्ति अब काफी बढ़ गई है । 'लोक व्यवस्था' पद को 'लोक व्यवस्था के हित में' से विभेद करते हुए, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जहां 'लोक व्यवस्था' पद हेतु मात्र हिंसा के उद्दीपन या हिंसा की प्रवृत्ति के साक्ष्य की आवश्यकता है जबकि 'लोक व्यवस्था के हित में' अभिव्यक्ति हिंसा या अव्यवस्था की प्रवृत्ति के किसी सबूत के बिना मात्र बुरी भावना को समाहित करते हुए बहुत व्यापक है ।[63]

4.18 **रामजी लाल मोदी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[64] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने अनुच्छेद 19(2) के 'लोक व्यवस्था के हित में' शब्दों की व्याप्ति पर विचार किया । यह तर्क किया गया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 295क दोनों किस्मों के अपमान अर्थात् ऐसे जो लोक अव्यवस्था फैलाते है और जो नहीं भी फैलाते को समाविष्ट करती है । यह तर्क किया गया कि ऐसी विधि जहां यह पहले किस्म को समाविष्ट करती है, यह कहा जा सकता है कि यह अनुच्छेद 19 के खंड (2) के अर्थान्तर्गत लोक व्यवस्था के हित में अधिनियमित किया गया किंतु जहां तक यह शेष किस्म को समाविष्ट करता हैं, यह उस खंड के भीतर नहीं आएगा । इस प्रकार, यह तर्क किया गया कि चूंकि उपबंध ऐसे भाषण को समाविष्ट करता है, जो लोक अव्यवस्था नहीं सृजित करते इसे असंवैधानिक और शून्य अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए तर्क की स्वीकृति से इनकार करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि 'लोक व्यवस्था के हित में' पद 'लोक व्यवस्था के अनुरक्षण के लिए' पद से काफी व्यापक अभिप्राय रखता है । न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि कतिपय क्रियाकलापों की प्रवृत्ति लोक अव्यवस्था कारित करना है तो ऐसे क्रियाकालपों को दंडित करने वाली विधि को अपराध के रूप में नहीं बल्कि 'लोक व्यवस्था के हित में' युक्तियुक्त निर्वचन अधिरोपित करने वाली विधि होना ठहराया जा सकता हैं, यद्यपि कुछ मामलों में उन क्रियाकालापों से वस्तुत: लोक व्यवस्था का भंग नहीं होता है । न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि धारा

---

[61] हरि सिंह गौड, II भारत की दंड विधि 1224 (ला पब्लिशर्स (इंडिया) प्रा. लि., इलाहाबाद, II संस्करण, 2011).

[62] ए. आई. आर. (1953)32 पटना 1104.

[63] वही पृ. 11 19 पर

[64] 1957 एस. सी. आर. 860.

295क धर्म के अपमान के गुरुतर रूप को ही दंडित करती है जब यह उस वर्ग की धार्मिक भावनाओं को आहत करने के जानबूझकर और दुर्भावपूर्ण आशय से किया जाता है । अपमान के इस गुरुतर प्ररुप की सोची-समझी प्रवृत्ति लोक व्यवस्था को स्पष्टत: भंग करते के लिए हैं और धारा जो ऐसे क्रियाकलापों को दंडित करती है, अनुच्छेद 19 के खंड (2) के संरक्षण के भीतर है । इस प्रकार न्यायालय ने दो कसौटियां नियत की : पहली 'गुरुतर रूप' जो ऐसा मापदंड परिभाषित करती है जिसे अपमान माना जाता है और दूसरा लोक व्यवस्था को भंग करने के लिए अपमान की 'सोची-समझी प्रवृत्ति' ।[65]

4.19 **राम नन्दन** बनाम **राज्य**[66] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने धारा 124क की संवैधानिकता पर विचार किया । धारा 124क को असंवैधानिक घोषित करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 124क न केवल अप्रीति के गुरुतर रुप के बारे में है बल्कि घृणा, अवमान और अप्रीति के लघुतम किस्म के लिए भी हैं । ऐसे दृष्टांत हो सकते हैं जहां भाषण के हिंसा के उद्दीपन के जीवाणु हो और ऐसे दृष्टांत जहां ऐसा नहीं हो । इस प्रकार, अप्रीति का लघुतम रूप भी धारा 124क के अधीन आ सकता है, जो संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) की स्कीम के विरुद्ध होगा ।

4.20 1960 में, **सुपरिटेंडेंट, केंद्रीय कारागार** बनाम **डा. राम मनोहर लोहिया**[67] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ को संविधान के अनुच्छेद 19(2) के 'लोक व्यवस्था के हित में' शब्दों का निर्वचन करने का अवसर मिला । भिन्न-भिन्न न्यायिक मत पर विचार करने के पश्चात्, न्यायालय ने पद को संक्षेप में निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया :-

> "पूर्वगामी चर्चा से निम्नलिखित परिणाम निकलता है : (1) 'लोक व्यवस्था' लोक सुरक्षा और प्रशांति का समानार्थी है ; राज्य की सुरक्षा को प्रभावित करते वाले आंदोलन, सिविल संघर्ष युद्ध जैसे राष्ट्रीय क्रांति के प्रतिकूल स्थानीय महत्व के भंग वाली अव्यवस्था का अभाव हैं ; (2) भाषण और लोक व्यवस्था के बीच निकटतम और युक्तियुक्त संबंध होना चाहिए ; (3) यथा विद्यमान धारा 3 अधिकांश मामलों में ऐसा कोई संबंध स्थापित नहीं करती ; (4) उल्लंघन करते वाले उस उपबंध के संदर्भ में पृथक्करणीयता के प्रश्न पर विरोधाभासी विनिश्चय है, जिसकी भाषा संवैधानिक अनुज्ञेय विधान की सीमाओं के भीतर और बाहर दोनों तरह के निर्बंधन समाविष्ट करने के लिए काफी व्यापक है । एक मत यह हैं कि इसे अलग नहीं किया जा सकता यदि संविधान द्वारा अनुमोदित प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने हेतु इसके प्रयोग की संभावना है और दूसरा मत यह है कि ऐसा उपबंध विधिमान्य है यदि यह ऐसे उद्देश्य के हेतु प्रयोग किए जाने में यह पृथक्करणीय है जो संवैधानिक अनुज्ञेय विधान की सीमाओं के बाहर आने

---

[65] लारेंस लियांग, 'स्वतंत्र वाक और अभिव्यक्ति', सुजीत चौधरी, माधव खोसला और प्रताप भानु मेहता (संस्करण), दि आक्सफोर्ड हैंडबुक आफ द इंडियन कांस्टीट्यूशन 827 (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 2016) https://doi.org/10.1093/law/9780198704898.003.0045 पर उपलब्ध (22 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[66] 1958 एस. सी. सी. आनलाइन इला. 117.

[67] (1960) 2 एस. सी. आर. 821.

वाले उद्देश्यों या अन्य उद्देश्यों से स्पष्ट सीमांकित है ; और (5) धारा के उपबंध इतने जटिल रूप से मिश्रित है कि पृथक्करणीयता के सिद्धांत को लागू करना संभव नहीं है ताकि इसके एक भाग की विधिमान्यता को पुष्टि करने और शेष को नामंजूर करने में हमें समर्थ बना सके ।"

2. केदार नाथ सिंह निर्णय

4.21 धारा 124क की संवैधानिकता की चुनौती पहली बार प्रत्यक्षत: **केदार नाथ सिंह** बनाम **बिहार राज्य**[68] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के समक्ष की गई । इसे विनिश्चित करने के लिए संस्थित संविधान न्यायपीठ ने धारा 124क की विधिमान्यता को कायम रखा । धारा 124क के इतिहास पर विस्तृत विचार करने के पश्चात् न्यायालय ने स्पष्टत: मान्यता प्रदान की कि राज्य को ऐसी ताकतों से संरक्षण की आवश्यकता है, जो राज्य की सुरक्षा और स्थिरता को नष्ट करना चाहते हैं । न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया :

"यह अपराध जिसे सामान्यत: राजद्रोह के अपराध के नाम से जाना जाता है, 'राज्य के विरुद्ध अपराध' शीर्षक से भारतीय दंड संहिता के अध्याय VI के अंतर्गत आता है । राज्य के विरुद्ध अपराध के इस किस्म का आविष्कार भारत में ब्रिटिश सरकार द्वारा नहीं किया गया बल्कि इंग्लैंड में शताब्दियों से ज्ञात था । प्रत्येक राज्य, चाहे सरकार का जो भी रूप हो,अपने उन लोगों को, जो अपने आचरण द्वारा राज्य की सुरक्षा और स्थिरता को खतरा पहुंचाते हैं या अनिष्ठा की ऐसे भावना का प्रचार करने है, जिससे राज्य में विद्रोह या लोक अव्यवस्था होन की प्रवृत्ति होती है, को दंडित करने की शक्ति से युक्त होती है ।[69] "

4.22 प्रशासन चलाने में कुछ समय के लिए लगाए गए व्यक्तियों से 'विधि द्वारा स्थापित सरकार' पद को भिन्न पाते हुए न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :

"विधि द्वारा स्थापित सरकार राज्य का दृश्य चिह्न है । राज्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा यदि विधि द्वारा स्थापित सरकार को नष्ट किया जाता है । अत:, विधि द्वारा स्थापित सरकार का अस्तित्व राज्य की स्थिरता की आवश्यक शर्त है । इसलिए, धारा 124क के अपराध के रूप में 'राजद्रोह" को लक्ष्यित किया गया है, जो राज्य के विरुद्ध अपराध से संबंधित अध्याय VI के अंतर्गत आता है । इसलिए, धारा 124क के अर्थान्तर्गत ऐसा कोई कार्य जो अपमान या घृणा या इसके विरुद्ध अप्रीति सृजित कर उस सरकार को नष्ट करने का प्रभाव रखता है, दांडिक कानून के भीतर होगा क्योंकि विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति अनिष्ठा की भावना या इसके प्रति दुश्मनी वास्तविक हिंसा के प्रयोग या हिंसा के उद्दीपन द्वारा लोक अव्यवस्था की प्रवृत्ति का विचार फैलाता है । दूसरे शब्दों में, कोई लिखा या बोला गया शब्द आदि, जिसमें हिंसा द्वारा सरकार को नष्ट करने का विचार सन्निहित हैं, जो संक्षिप्तत: 'आंदोलन' पद के अंतर्गत आते हैं, को प्रश्नगत धारा द्वारा दंडनीय बनाया गया है । किंतु धारा

[68] 1962 सप्ली. (2) एस. सी. आर. 769 : ए. आई. आर. 1962 एस.सी. 955.

[69] **केदार नाथ सिंह** बनाम **बिहार राज्य,** ए. आई. आर. 1962 एस.सी. 955.

में यह उपदर्शित करने की स्पष्टत: सावधानी बरती गई है कि विधिपूर्ण साधनों द्‌वारा उनके सुधार और परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए सरकार के उपायों की नापसंदगी को व्यक्त करने में प्रयुक्त कठोर शब्द धारा के भीतर नहीं आएंगे । इसी प्रकार, उन भावनाओं को उत्तेजित किए बिना, जो हिंसा के कार्यों द्‌वारा लोक अव्यवस्था कारित करने का आशय पैदा करते हैं, सरकार की कार्रवाइयों पर असंतोष व्यक्त करने वाली टिप्पणियां चाहे जितने कठोर शब्दों वाली हो, दंडात्मक नहीं होंगी । दूसरे शब्दों में, विधि द्‌वारा स्थापित सरकार के प्रति अनिष्ठा की बात नहीं है, जैसा सरकार या इसके अभिकरणों के उपायों या कार्यों पर कठोर शब्दों में टिप्पणी करना ताकि लोगों की दशा सुधारी जा सके या विधिपूर्ण साधनों द्‌वारा उन कार्यों या उपायों को रद्द या परिवर्तित किया जा सके अर्थात् दुश्मनी और अनिष्ठा की ऐसी उन भावनाओं को प्रदीप्त किए बिना जिनका निहितार्थ लोक अव्यवस्था का प्रदीपन या हिंसा का प्रयोग हो ।"[70]

4.23 अत:, न्यायालय ने निम्नलिखित व्यक्त करते हुए वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार और ऐसे अधिकार को निर्बंधित करने की विधायिका की शक्ति के बीच संतुलन निकाला;

"......राज्य की सुरक्षा, जो विधि और व्यवस्था के अनुरक्षण पर आधारित है, ऐसा बहुत आधारभूत विचार है, जिसके आधार पर राज्य के विरुद्ध अपराधों को दंडित करने के लिए विधान बनाए जाते हैं । एक ओर ऐसे विधान को पूर्णत: वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को संरक्षित और गारंटीकृत करता है, जो लोकतांत्रिक रूप की सरकार की अनिवार्य शर्त है, जो हमारे संविधान ने स्थापित किया है ...... किंतु स्वतंत्रता विधि द्‌वारा स्थापित सरकार के मिथ्यापवाद और निन्दा की अनुज्ञप्ति होने के विरुद्ध संरक्षित होती चाहिए, दूसरे शब्दों में, जो हिंसा प्रदीप्त करती है या लोक अव्यवस्था सृजित करने की प्रवृत्ति रखती है । प्रत्येक नागरिक को आलोचना या टिप्पणी के माध्यम से सरकार या उसके उपायों के बारे में जो कुछ वह चाहे कहने या लिखने का अधिकार है, जब तक विधि द्‌वारा स्थापित सरकार के विरुद्ध या लोक अव्यवस्था फैलाने के आशय से हिंसा के लिए लोगों को प्रदीप्त नहीं करता ।[71]"

4.24 उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त करने के लिए **केदारनाथ सिंह** वाले मामले में **रामजी लाल मोदी** वाले मामले के अपने पूर्व विनिश्चय पर विचार किया कि बाद वाला निर्णय वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल अधिकार के प्रयोग पर युक्तियुक्त निर्बंधन अधिरोपित करने की विधायिका की शक्ति की परिधि पर ठीक तरह से प्रकाश डालता है । उच्चतम न्यायालय ने **रामजी लाल मोदी** वाले मामलों में यथाअधिकथित समीप्यता की कठोर कसौटी पर विचार किया और **राम मनोहर लोहिया** वाले मामले में पुन: निर्वचन किया । इस प्रकार, राजद्रोह हेतु कसौटी अधिकथित करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब तक प्रयोग किए गए शब्दों या प्रश्नगत कार्रवाइयों से राज्य या लोगों की सुरक्षा को खतरा नहीं होता या किसी तरह की लोक अव्यवस्था नहीं होती, जो गंभीर प्रकृति की हो, कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 124क की परिधि के भीतर नहीं आएगा ।

---

[70] वही

[71] वही

4.25 यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि **केदार नाथ सिंह** वाले निर्णय के अनुसार राजद्रोह का अपराध साबित करने के लिए हिंसा का सबूत आवश्यक नहीं है । हिंसा के खतरे को अवधारित करने के लिए इस मामले में अधिकथित कसौटी की प्रकृति के संबंध में केदार नाथ सिंह ने वस्तुत: यू.एस.ए की 'आसन्न खतरे की कसौटी' पर भरोसा करने के बजाए यू. के. की 'प्रवृत्ति कसौटी' को अनुमोदित किया ।[72] ऐसा इसलिए क्योंकि संपूर्ण निर्णय में, वास्तविक हिंसा या हिंसा के आसन्न खतरे के बजाए हिंसा या अव्यवस्था की प्रवृत्ति या उद्दीपन पर फोकस किया गया है । यह कि अभियुक्त केदारनाथ सिंह को हिंसा के प्रत्यक्ष उद्दीपन या लोक अव्यवस्था के किसी आसन्न खतरे के किसी सबूत के बिना उसके भाषण के लिए दोषसिद्ध और दंडित किया गया, यह भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का निर्वचन करने के लिए 'प्रवृत्ति कसौटी' अपनाने का न्यायालय का अगला प्रमाण है ।[73] न्यायालय द्वारा लागू की गई प्रवृत्ति की यह वस्तुनिष्ठ कसौटी हेतु न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अभिकथित राजद्रोहात्मक सामग्री, परिस्थितियों और अभियुक्त के आचरण की परीक्षा करना आवश्यक हो जाता हैं। इस कसौटी के लिए निश्चय ही वास्तविक हिंसा या विवादित सामग्री के वास्तविक प्रभाव जैसा अभिकथित राजद्रोहात्मक अभिव्यक्ति के परिणामों की जांच करना आवश्यक नहीं है । यदि भाषण या अभिव्यक्ति जानबूझकर की गई है और अन्तर्वस्तु काफी घातक है तो हिंसा की प्रवृत्ति साबित करने के लिए किसी प्रत्यक्ष आचरण के सबूत की अपेक्षा नहीं है । ऐसे निष्कर्ष के उपेक्षा नहीं है । ऐसे निष्कर्ष के अभाव में, उच्चतम न्यायालय केदारनाथ सिंह की दोषसिद्धि को कभी कायम नहीं कर सकी ।[74]

3. केदारनाथ सिंह वाले मामले के निर्णय के पश्चात् हुए विनिर्णय

4.26 उच्चतम न्यायालय द्वारा **केदारनाथ सिंह** वाले मामले के निर्णय के पश्चात्, लोक अव्यवस्था को न्यायालयों द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के आवश्यक घटक के रूप में माना गया है । न्यायालय यह स्पष्टत: व्यक्त करने हैं कि सरकार की प्रत्येक आलोचना राजद्रोह की कोटि में नहीं आती और किसी कार्य के राजद्रोहात्मक आशय का लांछन लगाने के पूर्व भाषण के वास्तविक आशय पर विचार किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने **रघुवीर सिंह** बनाम **बिहार राज्य**[75] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि षड्यंत्र और राजद्रोह का अपराध गठित करने के लिए यह आवश्यक है कि अभियुक्त द्वारा स्वयं राजद्रोहात्मक सामग्री लिखी गई हो या वस्तुत: घृणा, अवमान या अप्रीति फैलाने का प्रयास किया गया हो ।

4.27 **बलवंत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[76] वाले मामले में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि किसी प्रत्यक्ष कार्य के बिना राज्य के विरुद्ध मात्र कुछ समय तक नारे लगाना जिससे लोगों में किसी

---

[72] मनोज कुमार सिन्हा और अनुराग दीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 248 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018)

[73] वही

[74] वही

[75] ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 149.

[76] (1995) 3 एस. सी. सी. 214.

भी व्यक्ति द्वारा न कोई उत्तर न कोई प्रतिक्रिया हो भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के उपबंधों को लागू नहीं होता ।

4.28 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अनुच्छेद 10(2) में उपवर्णित युक्तियुक्त निर्बंधन के साथ इसके विरोध के मुद्दे पर संक्षिप्ततः विचार करते हुए उच्चतम न्यायालय ने **एस. रंगराजन** बनाम **पी. जगजीवन राम**[77] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि स्वतंत्र आचरण और विशेष हित पर निर्बंधन के बीच संतुलन होना चाहिए क्योंकि दोनों का संतुलन नहीं बनाए रखा जा सकता यद्यपि दोनों का स्तर समान है । 'पाउडर पीपे में चिनगारी' की सादृश्यता का अवलंब लेते हुए, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मानक से विपथन के रूप में अपवादों का ठीक से अथान्वर्यन किया जाना चाहिए क्योंकि आपवादिक परिस्थितियों के सिवाय स्वतंत्र भाषण अभिभावी होना चाहिए ।[78] न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :

> "अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के हित और विशेष हित के बीच वस्तुतः सामंजस्य होना चाहिए । लेकिन हम दोनों हितों का संतुलन सामान्यतः नहीं कर सकते क्योंकि दोनों का स्तर समान है । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की हमारी वचनबद्धता की यह मांग है कि इसे दबाया नहीं जा सकता जब तक कि स्वतंत्रता अनुज्ञात करने से उत्पन्न स्थिति अति आवश्यक है और सामुदायिक हित खतरे में है । पूर्वानुमित खतरा दूरस्थ, आनुमानिक और अस्वाभाविक नहीं होना चाहिए । इसका अभिव्यक्ति से समीपस्थ और प्रत्यक्ष संबंध होना चाहिए । विचार की अभिव्यक्ति से लोकहित को आंतरिक खतरा होना चाहिए । दूसरे शब्दों में, अभिव्यक्ति 'पाउडर पीपे में चिनगारी' के समान अनुध्यात कार्रवाई से अपृथकतः जकड़ा होना चाहिए ।"

4.29 **विलाल अहमद कालू** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[79] वाले मामले में न्यायालय ने उक्त धारा के अधीन आरोपों को अभिलिखित किया क्योंकि न्यायालय के समक्ष यह साबित नहीं हुआ कि अपीलार्थी ने ऐसा कुछ किया जिससे विधि द्वारा स्थापित सरकार के अस्तित्व को खतरा पहुंचेगा या लोक अव्यवस्था कारित हो सकती है । **नजीर खान** बनाम **दिल्ली राज्य**[80] वाले मामले में, न्यायालय ने यह व्यक्त करने हुए इस सिद्धांत को दोहराया :

> "राजद्रोह को कार्रवाई में अनिष्ठ रूप में वर्णित किया गया है और विधि उन सभी पद्धतियों को राजद्रोह मानती हैं जिनका उद्देश्य असंतोष या नापसंदगी का उद्दीपन, लोक विक्षोभ पैदा करना या सिविल युद्ध उकसाना ; संप्रभु या सरकार, विधि या क्षेत्र के संविधान के प्रति घृणा

---

[77] (1989) 2 एस. सी. सी. 574.

[78] लारेंस लियांग, 'स्वतंत्र वाक और अभिव्यक्ति', सुजीत चौधरी, माधव खोसला और प्रताप भानु मेहता (संस्करण), द आक्सफोर्ड हैडबुक आफ द इंडियन कांस्टीट्यूशन 828 (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 2016) (22 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[79] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 3438.

[80] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 4427.

या अवमान पैदा करना और सामान्यत: लोक अव्यवस्था फैलाने का हर संभव प्रयास करना है।"

4.30 **कामन काज** बनाम **भारत संघ**[81] वाले मामले में विभिन्न न्यायालयों में राजद्रोह के लंबित मामलों के पुनर्विलोकन के लिए निदेश जारी करने हेतु अनुरोध किया गया जहां वरिष्ठ पुलिस अधिकारी यह प्रमाणित करें कि 'राजद्रोहात्मक' कार्य से या तो हिंसा का उद्दीपन हुआ या लोक अव्यवस्था फैलाने की प्रवृत्ति या आशय था । न्यायालय ने अनुरोध स्वीकार किया और प्राधिकारियों को निदेश दिया । भारतीय दंड संहिता की धारा 124क पर विचार करते समय, वे केदार नाथ सिंह वाले मामले में अधिकथित सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित हो ।

4.31 **विनोद दुआ** बनाम **भारत संघ**[82] वाले मामले में केदार नाथ सिंह वाले मामले की अधिकथित विधि की पुष्टि करते हुए न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि नागरिक को सरकार द्वारा लिए गए उपायों और उसके कृत्यकारियों की आलोचना या टिप्पणी करने का अधिकार है जब तक वह विधि द्वारा स्थापित सरकार के विरुद्ध हिंसा के लिए या लोक अव्यवस्था फैलाने के आशय से लोगों को उद्दीपित नहीं करता और यह केवल तभी है जब शब्दों या अभिव्यक्तियों की घातक प्रवृत्ति है या लोक अव्यवस्था पैदा करने या विधि और व्यवस्था को अस्तव्यस्त करने का आशय है, तो धारा 124क का अवलंब लिया जा सकता है ।[83]

4.32 **एस. जी. बोम्बैटकेरे** बनाम **भारत संघ**[84] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपने तारीख 11 मई, 2023 के आदेश द्वारा सभी राज्य सरकारों और केंद्रीय सरकार को धारा 124क के अधीन विरचित आरोप से उद्भूत सभी लंबित विचारणों, अपीलों और कार्यवाहियों को आस्थगित रखने का निदेश दिया । न्यायालय ने अपनी प्रथमदृष्ट्या मताभिव्यक्ति में यह राय व्यक्त किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124क की कठोरताएं वर्तमान सामाजिक वातावरण के अनुरुप नहीं है और उस समय के लिए आशयित थे जब यह देश औपनिवेशिक शासन के अधीन था ।[85]

5. राजद्रोह सापेक्ष स्वतंत्र भाषण

5.1 स्वतंत्र भाषण लोकतंत्र का प्रमाणक है । इस स्वतंत्रता का प्रयोजन व्यक्ति को आत्मपूर्णता प्राप्त करने की अनुज्ञा प्रदान करना, सत्य का पता लगाने में सहायता करना, विनिश्चय लेने में व्यक्ति की क्षमता को बढ़ाना और स्थिरता और सामाजिक परिवर्तन के बीच संतुलन बनाना सुकर

---

[81] (2016) 15 एस. सी. सी. 269.

[82] 2021 एस. सी. सी. आनलाइन 414.

[83] वही

[84] (2022)7 एस. सी. सी. 433.

[85] वही पृ. 436 पर

करना है ।[86] इसका उल्लेख मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 (यू.डी.एच.आर.) की उद्देशिका और अनुच्छेद 19 में है ।

5.2 तथापि, इसके उत्तरदायित्वपूर्ण प्रयोग को सुनिश्चित करने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि सभी नागरिकों को समानत: उपलब्ध हो, इस अधिकार पर हमेशा युक्तियुक्त निर्बंधन लगाए जा सकते हैं । सिविल और राजनैतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय कन्वेंशन के अनुच्छेद 19(3) के अनुसार इस स्वतंत्रता पर निर्बंधन लगाया जाए बशर्ते वे विधि द्वारा विहित हो और 'अन्य लोगों के अधिकारों या ख्याति का सम्मान करने के लिए आवश्यक है' या 'राष्ट्रीय सुरक्षा, लोक व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य या नैतिकता' के लिए है ।[87]

5.3 इसी प्रकार, भारत के संविधान का अनुच्छेद 10(1)(क) सभी नागरिकों को वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की गारंटी प्रदान करता है । तथापि, अनुच्छेद 19(2) ऐसे कतिपय निर्बंधनों का उपबंध करता है, जिसके अधीन अर्थात् भारत की संप्रभुता और अखंडता के हितों में, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण संबंध, लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या नैतिकता या न्यायालय का अपमान, बदनामी या अपराध के उद्दीपन के संबंध में यह स्वतंत्रता हो सकती है ।

5.4 भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के अधीन उपबंधित राजद्रोह के अपराध की सुसंगति सतत् और बेरोक टोक बहस का विषय है, जो इसका विरोध करते है । इस उपबंध को भारतीय औपनिवेशिक शासन का अवशेष मानते है । दूसरी ओर, यह तर्क किया जाता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा की बढ़ती चिंता के बीच यह उपबंध ऐसे उद्गारों पर युक्तियुक्त निर्बंधन लगता है, जो राष्ट्र की सुरक्षा और अखंडता के लिए घातक है । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ सामूहिक राष्ट्रीय हित का संतुलन बनाए रखना इस विधि का एक प्रमुख तत्व है । वस्तुत:, किसी सरकार को गिराने के मुख्य उद्देश्य के साथ की गई विसम्मति तब तक लोकतांत्रिक ढ़ांचे को मजबूत करती है जब तक यह चरमसीमा के शरारती प्रचार का उपयोग नहीं करती या हिंसा या अव्यवस्था की प्रवृत्ति नहीं अपनाती या देश के विखराव का समर्थन नहीं करती ।[88] राजद्रोह का प्रयोजन राज्य की सुरक्षा और स्थिरता के विरुद्ध धमकी को नियंत्रित करना मात्र नहीं है बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि कहीं सरकार की विधिमान्य आलोचना भी समाप्त न हो जाए ।[89]

---

[86] स्टीफेन चमिडट एंड मैक सी. शेल्ली ईट अल, अमेरिकन सरकार एंड पोलिटिक्स टूडे 11 (सेनगैग लर्निंग, यू.एस.ए. 2014).

[87] सिविल और राजनैतिक अधिकार अंतरराष्ट्रीय संविदा, 99 यू.एन.टी.एस. 171(1966) का अनुच्छेद 19 इस प्रकार है :

"इस अनुच्छेद के पैरा 2 में उपबंधित अधिकारों का प्रयोग अपने साथ कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को लाता है । अत: यह कतिपय निर्बंधनों के अधीन हो सकता है किंतु ये इसप्रकार है, जो विधि द्वारा उपबंधित हैं और आवश्यक हैं :

(क) अधिकारों के सम्मान और अन्य लोगों की ख्याति के लिए ;

(ख) राष्ट्रीय सुरक्षा या लोक व्यवस्था या लोक स्वास्थ्य और नैतिकता के लिए."

[88] मनोज कुमार सिन्हा और अनुरागदीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, 188 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018).

[89] वही पृ. 6 पर

5.5 जहां तक विरोधात्मक आवाजों द्वारा अपनाए गए साधन संवैधानिक और वैध है, वहां तक सरकार की आलोचना नापसंदगी मात्र होगी न कि अप्रीति । तथापि, उसी क्षण जब नापसंदगी हिंसा को उद्दीपन की ओर जाती है या केवल उपलब्ध आश्रय के रूप में हिंसा का उद्दीपन अपनाती है, राजद्रोह का अपराध क्रियाशील हो जाता है ।[90]

5.6 यह उल्लेख करना श्रेयस्कर है कि यूनाईटेड स्टेट आफ अमेरिका जैसे राज्य में भी जो राज्य को प्रथम संशोधन-स्वतंत्र वाक् और अभिव्यक्ति के अधिकार को कम करने हेतु किसी विधान को अधिनियमित करने से अभिनिषिद्ध करती है, न्यायपालिका ने कांग्रेस द्वारा बनाई गई विधियों को संरक्षित करने के लिए पुलिस शक्ति के सिद्धांत का आविष्कार किया । इस प्रकार, ऐसे राज्य में भी जो 'वाक् की स्वतंत्रता' की 'निरपेक्षता' को अपनाते हैं वहां भी उक्त अधिकार निरपेक्ष नहीं है।

5.7 आगे, संविधान निर्माताओं ने यह विचार-विमर्श करते समय कि कौन सा मोडल रखा जाए, अंततः 'निरपेक्ष' मोडल को खारिज करने का विनिश्चय किया और 'व्यक्ततः निर्बंधनात्मक' मोडल को अपनाने का विनिश्चय किया ।[91] डा. अम्बेडकर ने उल्लेख किया :

> "प्रारुप संविधान ने जो किया वह यह है कि मूल अधिकारों को निरपेक्ष निबंधनों में विरचित करने और पुलिस शक्ति के सिद्धांत का आविष्कार कर संसद् को बचाने के लिए हमारे उच्चतम न्यायालय पर आश्रित रहने के बजाए, यह राज्य को सीधे मूल अधिकारों पर सीमाएं अधिरोपित करने की अनुज्ञा देता है । वास्तव में परिणाम को कोई अंतर नहीं है, जो एक प्रत्यक्ष रूप से (सीधे) करता है वहीं दूसरा अप्रत्यक्ष रूप से करना है । दोनों मामलों में, मूल अधिकार निरपेक्ष नहीं है ।"[92]

5.8 भारत में वाक् और अभिव्यक्ति का मूल अधिकार न केवल अनुच्छेद 19(2) के अधीन उपबंधित आठ युक्तियुक्त निर्बंधनों के अधीन है बल्कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 358 के अधीन आपातकाल के दौरान भी निलंबित किया जा सकता है ।[93] संविधान सभा और संसद् का आशय केवल यू.एस. मोडल से इसे विभेदित करना नहीं था बल्कि ठोस अलगाववादी और विखराववादी प्रवृत्तियों के कारण इसे पर्याप्त दूर रखना भी था ।[94]

5.9 मूल संविधान का अनुच्छेद 19(1)(क) खंड (2) अर्थात् अपमान लेख, अपमान बचन, मानहानि, न्यायालय का अवमान, शालीनता या नैतिकता को प्रभावित करने वाला कोई विषय, जो

---

[90] **केदार नाथ सिंह** बनाम **बिहार राज्य,** ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 955.

[91] डा. अम्बेडकर, पुनः प्रारुप संविधान संकल्प, VII सी.ए.डी. 4 नवंबर, 1948, https://www.constitutionofindia.neVconstitution_assembly_debates/volume/?/1948-I I -04 पर उपलब्ध (1 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा)

[92] वही

[93] भारत का संविधान, अनुच्छेद 358.

[94] मनोज कुमार सिन्हा और अनुरोगदीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 204-205 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018)

राज्य की सुरक्षा को क्षीण करता है या इसे उखाड़ फेकने की प्रवृत्ति रखता है, मे विहित शर्तों के अधीन 'वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के मूल अधिकार की गारंटी देता है । उच्चतम न्यायालय और कई उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए अनेक निर्णयों[95] से परेशान होकर पं. नेहरु ने डा. अम्बेडकर को यह मत व्यक्त करते हुए लिखा कि विधि और व्यवस्था विषयक संवैधानिक उपबंधों और दमनात्मक गतिविधियों को संशोधित करने की आवश्यकता है ।[96]

5.10 डा. अम्बेडकर की उपमति के परिणामस्वरूप, प्रधानमंत्री नेहरु ने 12 मई, 1951 को लोक सभा में प्रथम संशोधन का प्रारूप पुर:स्थापित किया । स्वतंत्र भाषण को निर्बंधित करने के आधारों के रूप में 'लोक व्यवस्था' और 'अपराध के उद्दीपन' के सम्मिलन के बारे में पं. नेहरु ने चिल्लाकर कहा कि संविधान को स्थिति का मुकाबला करने के लिए संसद् की शक्ति को सीमित नहीं करना चाहिए ।[97] उन्होंने आगे कहा कि 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अवधारणा को सामाजिक स्वतंत्रता और व्यक्ति तथा सामाजिक समूह के संबंधों के बीच संतुलन बनाए रखा जाए ।'[98] अंतत: इसके पश्चात् प्रथम संशोधन[99] ने भूतलक्षी और भविष्यलक्षी प्रभाव से सरकार को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर 'राज्य की सुरक्षा' के हित में ('राज्य को उखाड़ फेंकने की प्रवृत्ति' के स्थान पर) विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण संबंध, लोक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता या न्यायालय के अपमान के संबंध में, मानहानि ('अपमान लेख' और 'अपमान वचन' शब्दों के स्थान पर) या अपराध का उद्दीपन हेतु 'युक्तियुक्त निर्बंधन' अधिरोपित करने की शक्ति प्रदान की ।[100]

5.11 वर्ष 1963 में सोलहवें संविधान संशोधन ने आगे अनुच्छेद 19(2) में 'भारत की संप्रभुता और अखंडता' पद जोड़कर स्वतंत्र भाषण पर युक्तियुक्त निर्बंधन को मजबूत किया ।[101] इसके लिए भारतीय भू-क्षेत्रों में चीन के आक्रमण, जिसके परिणामस्वरूप अंतत: 1962 में भारत-चीन युद्ध हुआ, एक मुख्य प्रमुख कारण के साथ कई अन्य कारण थे । 1961 के मध्य में मास्टर तारा सिंह की सिक्ख राज्य, पंजाबी सूबा के लिए लंबी भूख हड़ताल और मद्रास, मैसूर, केरल और आंध्र को मिलाकर

---

[95] **बिहार राज्य** बनाम **शैलबाला देवी**, 1952 (3) एस. सी. आर. 654, भारतीय प्रेस वाला मामला ए. आई. आर. 1951 पटना 21 ; **रोमेश थापर** बनाम **मद्रास राज्य**, 1950(1) एस. सी. आर. 602.

[96] गेनविले आस्टिन, वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशन ; द इंडियन एक्सपीरियंस 42 (आस्कफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, नई दिल्ली, 1999).

[97] वही पृ. 46 पर

[98] 12वीं संसदीय बहस, भाग 2, कोल. 8815-32 (16 मई, 1951; संसदीय बहस प्रांतीय संसद के दौरान लोक बहस पदनाम के लिए थी).

[99] संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951.

[100] गेनविले आस्टिन, वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशन ; द इंडियन इस्कपीरियेंस 49 (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रसे, नई दिल्ली, 1999).

[101] संविधान (सोलवां संशोधन) अधिनियम, 1963.

द्रविद्रानद नामक भारत से पृथक अस्तित्व की द्रविड़ मुनेत्र कडगम (ड.एम.के.) की मांग चिंता के मुद्दे थे ।[102]

5.12 सिक्ख आंदोलन का सामना करने और डी.एम.के. के झुकाव को जानते हुए अगस्त, 1961 मे हुए मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन ने एकमत से यह सिफारिश की कि अलगाव की वकालत को दंडात्मक अपराध बनाया जाए । परिषद् की रिपोर्ट ने यह सिफारिश की कि 'केंद्र से अलगाव की किसी मांग को असंवैधानिक बनाया जाए ।'[103] तत्कालीन विधि मंत्री अशोक कुमार सेन ने 21 जनवरी, 1963 को लोक सभा में सोलहवां विधेयक पुर:स्थापित करने हुए कि इसका प्रयोजन ऐसे उन व्यक्तियों या संगठनों के विरुद्ध निर्बंधन अधिरोपित करने की समुचित शक्ति प्रदान करता है जो निर्वाचन लड़ने के प्रयोजन से राजनैतिक प्रयोजनों के लिए भारत से अलगाव या भारत से पृथक् होना चाहते हैं । संशोधन एकमत से पारित हो गया । कई या अनेकों द्वारा इसे महान उपलब्धि के रूप में स्वागत किया गया, विशेषकर संशोधन के परिणामस्वरूप डी.एम.के. के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए जब बाद में उसी वर्ष डी.एम.के. ने कहा कि हमेशा के लिए द्रविड़नाडु की मांग छोड़ देगा और आगे भारत की संप्रभुता और अखंडता के लिए सच्चाई और निष्कपटता से खड़ा रहेगा ।[104]

5.13 इस प्रकार, वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर एक के बाद दूसरा युक्तियुक्त निर्बंधन अधिरोपित करने का संपूर्ण उद्देश्य जैसाकि संविधान सभा में हुई चर्चा और संविधान के प्रथम और सोलहवें संशोधन के पूर्व हुई बहस और विचार-विमर्श से स्पष्ट है, प्रमुखतया भारत की संप्रभुता, भू-राज्य क्षेत्रीय अखंडता और सुरक्षा का सुरक्षोपाय करना तथा लोक व्यवस्था के हित को सुरक्षित करना था । यह ही वह प्रसंग है, जिससे भारत में राजद्रोह के अपराध का सही अभिप्राय समझना महत्वपूर्ण हो जाता है । वास्तविक ठोस पृष्ठभूमि, जो अब भी विद्यमान हैं, के साथ राजद्रोह के अपराध की आवश्यकता को प्रसंगगत करना महत्वपूर्ण है । इसका प्रयास अगले अध्याय में किया गया है ।

6. भारत की आंतरिक सुरक्षा को खतरा

6.1 देश की आंतरिक सुरक्षा को इसके भू-राज्य क्षेत्रीय सीमाओं के सुरक्षोपायों में और इसकी संप्रभुता के संरक्षण में जुड़े साधित्रों को प्राप्त करने के रूप में समझा जा सकता है ।[105] आंतरिक

---

[102] यह 1962 के सामान्य निर्वाचन के डी.एम.के. के घोषणा पत्र में कहा गया और दिसंबर, 1961 में कोयम्बटूर में अंगीकृत किया गया.

[103] गेनविले आस्टिन, वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशन ; द इंडियन इस्कपीरियेंस 51-52 (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रसे, नई दिल्ली, 1999).

[104] वही पृ. 52 पर

[105] सामाजिक और राजनैतिक अनुसंधान फाउंडेशन, भारत में 'आंतरिक सुरक्षा की चुनौती'. (नई दिल्ली, 2019) (इसके पश्चात् 'एस.पी.आर.एफ.).'

सुरक्षा और संप्रभुता के बीच कड़ी सुस्थापित है ।[106] यह अनिवार्य है कि देश की आंतरिक सुरक्षा को इसकी संप्रभुता के उपयोग और इसके भू-राज्य क्षेत्रीय अखंडता को सुरक्षित रखने हेतु समर्थ बनाने के लिए परिरक्षित रखा जाए ।

6.2 आगे, पूर्ववर्ती पर कोई हमला निश्चित ही पश्चातवर्ती पर हमला है ।[107] बहु धार्मिक मानवजातीय, क्षेत्रीय और भाषायी पहचानों और उपमहाद्वीप में अद्भुत भौगोलिक स्थिति वाले भारत जैसे बहुलतावादी समाज में आंतरिक सुरक्षा राष्ट्र के अस्तित्व के लिए अनिवार्य है ।[108] राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (एन.एस.ए.) श्री अजीत डोवाल ने भारतीय पुलिस सेवा के परिवीक्षाधीन अधिकारियों के 2014 बैच के अपने संबोधन में यह उल्लेख किया :

> "अब हम चौथी पीढ़ी के युद्ध के एक अदृश्य सेना के विरुद्ध कठिन युद्ध स्थिति में हैं चाहे यह एक संगठित अपराध, आंतकवाद, बगावत या विदेशी शक्तियों का हमारे आंतरिक कार्यों में हस्तक्षेप करने का प्रयास है ।"[109]

6.3 आंतरिक सुरक्षा बनाए रखने पर अधिक फोकस डालने पर बल देते हुए, श्री डोवाल ने एक अन्य संबोधन मे यह टिप्पणी की :

> "युद्ध राजनैतिक या सैनिक उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रभावी उपकरण नहीं रह गए हैं । वे काफी मंहगे, अप्राप्य और उनके परिणाम के बारे में अनिश्चितता है । यह ऐसी सिविल सोसाइटी है, जिसे राष्ट्र के हित को नुकसान पहुंचाने के लिए नष्ट, विभाजित और छलसाधित्र किया जा सकता है ।"[110]

6.4 गृह मंत्रालय ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट 2021-22 में भारत की आंतरिक सुरक्षा स्थापनों के लिए प्रमुख चुनौती के रूप में कतिपय क्षेत्रों में माओवादी अग्रवाद, उत्तर-पूर्व में घुसपैठ और जम्मू और कश्मीर (जे एंड के) और देश के भीतर प्रदेश में आतंकवाद को मान्यता प्रदान की ।[111]

---

[106] एस. एम. मकिन्दा, 'संप्रभुता और वैश्विक सुरक्षा' 29(3) सुरक्षा बातचीत 281-292(1998).

[107] वही

[108] सुमित गांगुली, ई.टी.एल. (ईडी), द आक्सफोर्ड हैंडबुक आफ इंडिया नेशनल सेक्युरिटी (आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 2018).

[109] भारत में प्रेस ट्रस्ट 'आंतरिक सुरक्षा भारत के लिए चुनौती बनती जा रही है: एन.एस.ए. अजीत डोवाल' (13 जुलाई, 2018) https://economictimes.indiatimes.com/news/defence/intemal-security-going-to-be-a-big-challengefor-india-nsa-ajitdoval/anicleshoW49609461.cms?utm source:contentofinterest&utm mediumnext&utm_campaign=cppst पर उपलब्ध (अंतिम बार मार्च 10, 2023 को देखा).

[110] टाइम्स न्यूज नेटवर्क, विध्वंसकारी ताकतों से भारत को बचाओ, एन.एस.ए. अजीत डोवाल ने आई.पी.एस. अधिकारियों से कहा (13 नवंबर, 2021) http://timesofindia.indiatimes.com/anicieshowlST6'14496.crns?utm source=contentofinterest&utm_medium=tex t&utm_campaign=cppst पर उपलब्ध (10 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[111] गृह मंत्रालय, 'वार्षिक रिपोर्ट 2021-2022' 6 (गृह मंत्रालय, भारत सरकार, (2022) (इसके पश्चात् 'एम.एच.ए. रिपोर्ट 2021-2022').

क. माओवादी उग्रवाद

6.5 कम्यूनिस्ट पार्टी आफ इंडिया माओवादी (सी.पी.आई. माओवादी) और विभिन्न अन्य ऐसे बैन संगठनों द्वारा चलाया जाने वाला विद्रोह विवादास्पद रूप से भारत में आंतरिक सुरक्षा के सबसे बड़ा खतरा है जैसाकि एक बार भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह द्वारा घोषित किया गया था ।[112] वर्ष 1967 में पश्चिमी बंगाल राज्य के नक्सलवादी क्षेत्र में इसकी उत्पत्ति होते हुए, माओवादी विद्रोह विभिन्न रूपों और छायाभासों के माध्यम से विकसित हुआ ।[113]

6.6 माओवादियों का उद्देश्य राजनैतिक शक्ति हथियाना और संरक्षित सशस्त्र संघर्ष के माध्यम से 'नया लोकतंत्र' परिधि पर लाना है । ऐसा करने के लिए वे भारत में संसदीय और लोकतांत्रिक रूप के शासन को उसे स्वांग बताते हुए खारिज करते हैं । इन वैचारिक उद्भवों और 'क्रांतिकारी हिंसा' के स्वच्छंदतावाद के माध्यम से ही माओवादी अपने पिछले पांच दशक के आंदोलन से दस राज्यों के 180 जिलों में अपनी उपस्थिति साबित करने में सफल रहे है ।

6.7 पांच दशकों से अधिक समय के अपने अस्तित्व से, माओवादी/नक्सलवादी स्वतंत्रता और आत्मसंकल्प की वकालत करने के आवरण में, अस्पतालों को नष्ट करते हैं, स्कूल जलाते हैं, सड़कें खराब करते हैं और निर्वाचन प्रक्रिया में भाग लेने वाले लोगों की हत्या करते हैं । इन समूहों की वास्तविक और आसन्न खतरे के परिणामस्वरूप भारी मात्रा में हिंसा, बलात्संग, लक्ष्यित हत्याएं आदि हुई । निम्नलिखित सारणी से यह प्रमाणित होता है :

सारणी 1 : माओवादी हिंसा से हुई मृत्यु संख्या : 2004-2021

वर्ष	घटनाएं	मृत्यु
2004	1533	566
2005	1608	679
2006	1509	678
2007	1565	696
2008	1591	721
2009	22s8	908
2010	2213	1005
2011	1760	611
2012	1415	415
2013	1136	397

[112] अंशुमान बेहरा, 'माओ से माओवाद तक : भारतीय मार्ग', नरेन्दर पानी और अंशुमान बेहरा (ईडी) रीजनिंग इंडियन पोलिटिक्स : दार्शनिक राजनीतिज्ञ से दर्शनशास्त्र चाहेने वाले राजनीतिज्ञ 182-204 (राउटलेज लंदन, 2018).

[113] वही

2014	1091	310
2015	1089	230
2016	1048	278
2017	908	263
2018	833	240
2019	670	202
2020	665	183
2021	509	147
कुल	**23401**	**8529**

स्रोत : गृह मंत्रालय[114]

6.8 लोकतंत्र और संवैधानिक रूप से स्थापित शासन को अस्वीकार करते हुए उनलोगों ने भारतीय राज्य की संप्रभुता को चुनौती दी । माओवादियों द्वारा सिविल लोगों, सरकारी कर्मचारियों और सुरक्षा बलों की जघन्य हत्याओं से सुरक्षा खतरे के इस पहलू का प्रतिबिम्बन होता है । गैर-राज्य कार्यों द्वारा हिंसा को विधिसम्मत ठहराना दूसरा गंभीर खतरा है, जो माओवादी और उनके जमीनी सहयोगी भारतीय समाज और राजनीति के सामने उपस्थित करते हैं ।

6.9 कोई भी पिछले वर्षों में माओवादी संबंधित हिंसा, घटनाओं में सारवान गिरावट देख सकता है क्योंकि आंदोलन के कई नेताओं को निष्प्रभावी या गिरफ्तार कर लिया गया है । यद्यपि माओवादी विद्रोह से होने वाली खतरे की अवधारणा काफी हद तक बनी हुई है, यह कुल मिलाकर क्षीण होते नहीं हो रही है ।

ख. उत्तर-पूर्व में उग्रवाद और मानवजातीय विरोध

6.10 कुछ उत्तर-पूर्व राज्यों में काफी समय से होने वाले उग्रवादी और हिंसात्मक मानव जातीय विरोध से देश की आंतरिक सुरक्षा को गंभीर चिंता है । ऐसी अलगाववादी स्थिति के प्रतिकूल जो 'समजातीय राज्य'[115] के विरुद्ध 'स्वतंत्रता संग्राम' के रूप में हिंसा और विरोध को अवधारित करता है । इसमें से अधिकांश विरोध प्राय: वास्तविक मुद्दों को छिपाकर कतिपय निहित हितों से उभरकर विरुपित भावनाओं द्वारा मार्गदर्शित होते हैं । गृह मंत्रालय में इन विरोधों को तीन व्यापक प्रवर्गों अर्थात् स्वतंत्रता की मांग करने वाले पृथकतावादी विद्रोही, उप'क्षेत्रीय भावनाओं का प्राख्यान करने वाले

---

[114] गृह मंत्रालय, 'वार्षिक रिपोर्ट (गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, भारत)' https://www.mha.gov.in/en/documents/annual-reports पर उपलब्ध (अंतिम बार 25 मार्च को देखा)

[115] अजय साहनी, 'भारत के उत्तर पूर्व में विरोध और समाधान का सर्वे' 12 फाल्टलाइन (2002) ble https://www.satp.org/satporgtp/publicatlon/fauhlines/volume I 2/article3.htm पर उपलब्ध (22 फरवरी, 2023 को अंतिम बार देखा).

विद्रोही ; प्रभावशाली छोटे जनजातीय समूहों के बीच आपस में अंत: मानव जातीय विरोध में रखा गया है ।[116] निम्नलिखित सारणी उत्तर-पूर्व में हिंसा की रुपरेखा को दर्शाती है ।

सारणी 2 : उत्तर-पूर्व में हिंसा की रुपरेखा 2014-2021[117]

वर्ष	घटनाएं	मारे गए चरमपंथियों	गिरफ्तार चरमपंथियों	मारे गए सुरक्षा बल	मारे गए नागरिक	व्यक्तियों का अपहरण/अपहरण
2004	1234	382	1099	414	110	225
2005	1332	406	1498	70	393	239
2006	1366	395	1406	76	309	306
2007	1491	514	1837	79	498	292
2008	1561	640	2566	46	466	416
2009	1297	571	2162	42	264	230
2010	773	247	2213	20	94	214
2011	627	114	2141	32	70	250
2012	1025	222	2145	14	97	329
2013	732	138	1712	18	107	307
2014	824	181	1934	20	212	369
2015	574	149	1900	46	46	267
2016	484	87	1202	17	48	168
2017	308	57	995	12	37	102
2018	252	34	804	14	23	117
2019	223	12	936	04	21	108
2020	163	21	646	05	03	69
2021	209	40	686	08	23	94

6.11 गृह मंत्रालय ने यह मत व्यक्त किया कि उत्तर-पूर्व में विद्रोह से संबंधित घटनाओं में कमी आई है और यह कि समग्र सुरक्षा स्थिति में, वर्ष 2014 की तुलना में वर्ष 2017 में सिविलियन मृत्यु में 83% और सुरक्षा **बल** घटनाओं 40% की कमी के साथ सुधार हुआ है ।

[116] राज्य सभा, 'भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों में सुरक्षा स्थिति', दो सौ तेरहवीं रिपोर्ट 1-2 (गृह मंत्रालय की विभाग संबंधित संसदीय स्थायी समिति, राज्य सभा, 19 जुलाई, 2018).

[117] एम. एच. ए. रिपोर्ट 2021-22 पृ. 18 पर.

6.12 पिछले वर्षों में इन गतिविधियों में चिह्नित कमी के बावजूद अभी तक पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई है । क्षेत्र में जनजातीय और मानवजातीय भाषायी अलगाववादी विरोध के साथ-साथ मानवजातीय अलगाववादी आंदोलन देखा जाता है । नागालैंड, असम का तत्कालीन भाग, उग्रवाद का अनुभव करने वाला पहला राज्य था और शीघ्र ही इसी प्रकार के आंदोलन मिजोरम, त्रिपुरा, असम और मणिपुर में होने लगे ।[118]

6.13 तथापि, प्रभावशाली और अल्पसंख्यक समूहों के बीच आंतरिक विरोध प्राय: भारतीय राज्य को एक समान दुश्मन के रूप में दोषारोपण करते हैं और बाद वाले को उत्तरदायी ठहराते हैं ।[119] इसके अलावा, आंतरिक विरोध और उग्रवाद के बाह्य घटक और उनकी विवक्षाएं उन्हें कायम रखने और उनके राज्य क्षेत्रों में उन्हें सुरक्षित मकान उपलब्ध कराने के निबंधनों में इन विध्वंसकारी आंदोलनों की विद्यमानता में सहायक रहे हैं ।

6.14 नागालैंड में नेशनल सोसिलिस्ट काउंसिल आफ नागलिम (खापलैंग)[120], मणिपुर में यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट (यू.एन.एल.एफ.)[121] असम में, यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट आफ असम (यू.एल.एफ.ए.), त्रिपुरा में आल त्रिपुरा टाइगर फोर्स (ए.टी.टी.एफ.) आदि जैसे अलगाववादी अग्रवादी समूह और आतंकवादी संगठन राष्ट्र की संप्रभुता, एकता और अखंडता को चुनौती दे रहे हैं । जनजातीय समूहों के बीच उप-क्षेत्रीय प्रेरणाओं के कारण होने वाले हिंसात्मक विरोध आगे भारत की लोकतांत्रिक और संवैधानिक प्रकृति को क्षीण करते हैं ।

ग. जम्मू और कश्मीर में आतंकवाद

6.15 कश्मीर भारत के सुरक्षा की कार्य सूची में मुख्य बिंदु बना रहता हैं । पाकिस्तान द्वारा अतिवाद फैलाकर और आतंकवाद को सुकर बनाकर तथा सामाजिक और राजनैतिक विखराव पैदाकर बढ़ाई गई स्थिति की जटिलता का सामना स्वतंत्रता से ही भारत द्वारा गंभीर सुरक्षा खतरे के रूप में किया जा रहा है ।

6.16 गृह मंत्रालय ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट 2021-22 में यह उल्लेख किया है कि जम्मू और कश्मीर तीन दशकों से अधिक समय से सीमापार प्रायोजित और समर्थित आतंकवाद और अलगाववादी हिंसा से प्रभावित रहा है ।[122]

6.17 जम्मू और कश्मीर में आतंकवादी प्रवृत्ति के रुझान को नीचे सारणी में दिया गया है ।

---

118 वही

119 अंशुमान बेहरा 'भारत की आंतरिक सुरक्षा : खतरा अवरोध और आगे बढ़ना' 15(2) क्लाज जर्नल 35 (विन्टर, 2021).

120 सुरिन्दर कुमार शर्मा और अंशुमान बेहरा, दक्षिणी एशिया में अग्रवादी समूह 90 (नई दिल्ली - आई.डी.एस.ए.-पैंटागन प्रेस, 2014).

121 वही पृ. 97 पर

122 एम. एच. ए. रिपोर्ट 2021-22 पृ. 218 पर

सारणी 3 : जम्मू और कश्मीर में 2004-2021 के दौरान हुई दुर्घटनाएं[123]

वर्ष	मारे गए सिविलियन	मारे गए सुरक्षा **बल**	कुल	मारे गए आतंकवादी
2004	707	281	988	976
2005	557	189	746	917
2006	389	151	540	591
2007	158	110	268	472
2008	91	75	166	339
2009	78	64	142	239
2010	47	69	116	232
2011	31	33	64	100
2012	11	38	49	50
2013	15	53	68	67
2014	28	47	75	110
2015	17	39	56	108
2016	15	82	97	150
2017	40	80	120	213
2018	39	91	130	257
2019	39	80	119	157
2020	37	62	99	221
2021	41	42	83	180

6.18 जम्मू और कश्मीर में चालू उग्रवाद 'अंतरराष्ट्रीय सीमा' और जम्मू और कश्मीर में 'नियंत्रण रेखा' दोनों सीमा पार से आतंकवादियों के घुसपैठ से जुड़ा है ।

6.19 जम्मू और कश्मीर राज्य में अलगाववाद और आतंकवाद के मुद्दे सुरक्षा खतरों के बाह्य और आंतरिक पहलुओं के बीच विभेद को धुंधला करते हैं । बाह्य आयाम अपने भू-राज्यक्षेत्र में आतंकवादी समूहों के आश्रय देने और समर्थन करते में और प्रत्यक्ष वित्तपोषण और प्रशिक्षण के माध्यम से जम्मू और कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियों के समर्थन में पाकिस्तान के प्रत्यक्ष रूप से शामिल होने से प्रकट होता है । सुरक्षा खतरे के आंतरिक आयाम को पृथक् राज्य का प्राख्यान करते हुए कश्मीर राष्ट्रवाद से जुड़े धार्मिक आतंकवाद से जोड़ा जा सकता है । कई पारस्परिक संबंधित

---

[123] गृह मंत्रालय, 'वार्षिक रिपोर्ट (गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, भारत)' https://www.mha.gov.in/en/documents/annual-reports पर उपलब्ध (25 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

मुद्दों की यह जटिल अभिक्रिया भारतीय राज्य के लिए प्रभावी रूप से सुरक्षा स्थिति से निपटाना कठिन बनाती है ।[124]

6.20 पाकिस्तान के अलावा, इन विरोधों और हिंसा को कायम रखने में चीन की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता । जम्मू और कश्मीर के लोगों को खुला बीजा जारी करने में चीन राज्य की घटना को भारत की संप्रभुता को क्षीण करने में नापाक प्रयास के रूप में देखा जा सकता है ।[125] पिछले कुछ वर्षों से भारतीय चीन सीमा और वास्तविक नियंत्रण रेखा पर वर्तमान तनाव और धक्का-मुक्की जम्मू और कश्मीर में भारत की आंतरिक सुरक्षा के प्रति चुनौतियां खड़ी करने में चीन का हाथ होने का संकेत देते हैं ।

घ. देश के अन्य भागों में अलगाववादी गतिविधियां

6.21 पूर्वोक्त आंतरिक सुरक्षा के खतरों के अलावा, देश के विभिन्न भागों में अलगाववादी प्रवृत्तियां उभर रही हैं । इनमें से 'खालिस्तान' या सिक्खों के लिए अलग राज्य का आंदोलन प्रमुख है । कई वर्षों से कई संगठन पृथक सिक्ख राज्य की मांग में अग्रगण्य रहे हैं । मोड़ बिंदु 1984 में आया, जिसके पश्चात् आंदोलन पहले ही अल्प स्थानीय समर्थन के कारण लुप्त हो गया और 1990 में कुचल दिया गया । तथापि, कनाडा, आस्ट्रेलिया, यूनाइटेड किंगडम, यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका आदि में रहने वाले भारतीयों के फैले संगठन, इसे पुन: उभारने में लगे हुए हैं ।[126]

6.22 इन संगठनों ने बार-बार भारत की संप्रभुता और भू-राज्य क्षेत्रीय अखंडता को नष्ट करने का प्रयास किया । वर्ष 2015 में, पूर्व वर्ष के स्काटिश स्वतंत्रता जनमत संग्रह से प्रभावित होकर सिक्ख फार जस्टिस (एसएफजे) नामक संगठन ने 'भारत अधिकृत पंजाब' को एक स्वतंत्र देश बनाने के लिए संपूर्ण विश्व के सिक्खों से समर्थन जुटाने के लिए जनमत संग्रह 2020 आंदोलन चालू किया ।[127] पृथक् राज्य के सृजन के लिए समर्थन मांगने हेतु अशासकीय जनमत संग्रह स्काटलैंड, आस्टेलिया, इंग्लैंड, कनाडा, यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका आदि में आयोजित किया गया । इसके अलगाववादी

[124] अब्दुल हमीद खान, जम्मू और कश्मीर में परिवर्तित सुरक्षा स्थिति ; आगे का मार्ग 7 (आई.डी.एस.ए. मोनोग्राफ सेरीज सं. 61,2017) https://w\,!"r.idsa.in/system/files/monograph/monograph6l.pdf पर उपलब्ध (2 मार्च, 2023 को देखा)

[125] प्रशांत कुमार सिंह 'चीन की कश्मीर नीति पर पुन: विचार' आई.डी.एस.ए. टिप्पणी (1 नवंबर, 2010) https://www.idsa.in/idsacomments/ RevisitingChinasKashmirPolicy pksingh _011110 पर उपलब्ध (2 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[126] प्रेमा कुरियन, 'यू.एस. जातीय और न्सलीय पहचान में परिवर्तन और सिक्ख अमेरिकन सक्रियतावाद' 4(5) आर.एस.एफ. : द रसेल सेज फाउंडेशन जर्नल आफ द सोसल साइंस 89-98 (2018).

[127] गुरुप्रीत सिंह निब्बर, 'जनमत संग्रह 2020 ? खालिस्तान विदेशी सिक्खों को विभाजित करता है, एकत्र करता है', हिंदुस्तान टाइम्स (4 अगस्त, 2015) https://www.hindustantimes.com/punjab/referendum-202O-khalistan-divides-unites-sikhs-abrod/story-QBIfntRW0zf7kVpw9XgmN.htm1 पर उपलब्ध (23 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा)

उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, भारतीय सरकार ने 2019 में एस.एफ.जे. को एक विधि विरुद्ध संगम वर्गीकृत किया और तदनुसार इस पर रोक लगा दी ।[128]

6.23 संपूर्ण देश के विभिन्न संगठनों द्वारा इसी प्रकार विध्वंसक आंदोलनों की हवा दी गई । स्टूडेंट मूवमेंट आफ इंडिया (एस.आई.एम.आई), जमात-उल-मुजाहिद्दीन बंगलादेश (जेएमबी), पापुलर फ्रंट आफ इंडिया (पीएफआई), रेहब इंडिया फाउंडेशन (आर.आई.एफ), कैम्पस फ्रंट आफ इंडिया (सीएफआई), आल इंडिया इमाम काउंसिल (एआईआईसी), नेशनल कनफेडरेशन आफ ह्यूमन राइट आर्गनाइजेशन (एनसीएचआरओ), नेशनल वूमेन फ्रंट, जूनियर फ्रंट, इम्पावर इंडिया फाउंडेशन और रेहब फाउंडेशन, केरल, इंडियन मुजाहिद्दीन (सिम्मी की एक शाखा) आदि जैसे प्रतिबंधित संगठनों को भारतीय जनसंख्या के कतिपय वर्गों में राष्ट्र विरोधी प्रवृत्ति को उकसाने और आतंकवादी गतिविधियों में लिप्त पाया गया । वर्ष 2017 में, दस अन्य सदस्यों के साथ-साथ सिमी प्रमुख को भारतीय दंड संहिता की धारा 124क, 122, 153क और यू.ए.पी.ए. के अन्य सुसंगत उपबंधों के अधीन दोषसिद्ध किया गया।[129]

6.24 अपने अतिवादी कार्यसूची और उग्रवादी विचारधारा के अनुसार देश की संवैधानिक अवसंरचना को परिवर्तित करने के प्रकट लक्ष्य के प्रति प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: कार्य करते हुए इन जैसे कई संगठन और समूह भारत की सुरक्षा स्थापन के लिए कठिन चुनौती दे रहे है ।

---

[128] भारत के राजपत्र (10 जुलाई, 2019) https://www.mha.gov.in/sites/default/files/SikhsForJustice_I 1092019_0.pdf पर उपलब्ध (23 मार्च 2023 को अंतिम बार देखा).

[129] भारतीय प्रेस ट्रस्ट 'राजद्रोह के लिए सेमी चीफ और अन्य दस लोगों को आजीवन कारावास' https://www.livemint.com,/Politics/vFhiSVwjfunWPPFcD9iNTK/Simi-chief+en-others-get-life-sentence-insedition-case.html पर उपलब्ध (26 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

7. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का अभिकथित दुरुपयोग

7.1 प्राय: यह अभिकथित है कि सरकारी प्राधिकारियों द्वारा विरोध को कुचलने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का दुरुपयोग किया जाता है । सक्रियतावादियों, निंदकों, लेखकों, पत्रकारों आदि के विरुद्ध विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा अप्रीति फैलाने हेतु विरोधियों को आरोपित कर राजनैतिक विरोध को शांत करने के लिए अवलंब लिए जाने के कारण उपबंध की कठोर आलोचना होती है । धारा 124क के आक्षेप का एक प्रमुख आधार यह है कि राजनैतिक नीतियों और व्यक्तित्वों की बलात निंदा और गैर-उत्तरदायी या असंवेदनशील प्रशासन की भर्त्सना को सभी संभावनाओ में सदोषत: राजद्रोहात्मक माना जाता हैं ।

7.2 राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो[130] (एनसीआरबी) द्वारा प्रस्तुत आंकड़े के अनुसार, संपूर्ण देश में 2019 में 93, 2020 में 73 और 2021 में 76 सहित 399 राजद्रोह के मामले फाइल किए गए । 2016 और 2020 के बीच फाइल 322 मामलों में से 144 में आरोपपत्र फाइल किए गए, कुल 23 मामलों में गलत होना या विधि का भूल होना पाया गया और साक्ष्य की कमी के कारण 58 मामलों को बंद कर दिया गया । कई वर्षों से, राजद्रोह के मामलों में दोषसिद्धि 3% और 33% के बीच घट-बढ़ रही हैं ।[131]

7.3 जहां राजनैतिक वर्ग को राजद्रोह विधि का दुरुपयोग करने के लिए दोषी ठहराया जा सकता है वहीं समस्या की जड़ पुलिस की सहअपराधिता का भी है । कभी-कभी राजनैतिक आकाओं को खुश करने के अतिउत्साह में, इस संबंध में पुलिस की कार्रवाई पक्षपातपूर्ण हो जाती है न कि विधि के अनुसार । इसके अतिरिक्त, पुलिस प्राधिकारियों द्वारा राजद्रोह की विधि का गलत निर्वचन के कारण भी इसका दुरुपयोग होता है । किसी मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का अवलंबन बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि कैसे पुलिस मनमाने ढंग से इस उपबंध की भाषा का निर्वचन करती है और यह मानते हुए कि अभिकथित किया गया कार्य लोक व्यवस्था से संबंधित है । जब पुलिस थाने में धारा 124क से संबंधित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की जाती हैं तो कैसे संबद्ध पुलिस अधिकारी स्थिति को समझता है और विधि का आरोप लगाना पूर्णत: उपबंध पर उसके निजी निर्वचन पर निर्भर करता है । यह निर्वचन आगे इस आधार पर भिन्न-भिन्न हो सकता है कि क्या प्रभारी पुलिस अधिकारी छोटे स्तर का अधिकारी या उच्च पदस्थ अधिकारी है ।

7.4 यद्यपि, हमारी विचारित राय में, विधि प्रवर्तन प्राधिकारियों द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के किसी दुरुपयोग को रोकने के लिए कतिपय प्रक्रियागत मार्गदर्शक सिद्धांत अधिकथित करना अनिवार्य है क्योंकि इस उपबंध के दुरुपयोग का अभिकथन विवक्षा द्वारा इसके निरसन के

---

[130] गृह; मंत्रालय, '2021 भारत में अपराध' 442-446 (नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो, गृहह मंत्रालय, भारत सरकार, 2022) https,'l/ncrb.gov.in/en/Crime-in-India-2021 पर उपलब्ध (20 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[131] दीप्तिमान तिवारी, '2014 से 399 राजद्रोह मामले, बहुत अधिक लंबित मामले' द इंडियन एक्सप्रेस 31 मई, 2022 https://indianexpress.com/anic le/explained/sedition-cases-pendency-explained-79 123 I I / पर उपलब्ध ((20 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

मांग की अपेक्षा नहीं करता । व्यक्तिगत दुश्मनी और निहित हितों के मामलों में भी अपनी पुरानी दुश्मनी निकालने के लिए भी बुरे आशयित व्यक्तियों द्वारा दुरुपयोग किए जातें हुए विभिन्न विधियों के अनेकों उदाहरण है,यहां तक कि उच्चतम न्यायालय कई विनिश्चयों में ऐसा मानती है । मात्र इस आधार पर कि जनता के एक वर्ग द्वारा इनका दुरुपयोग किया जा रहा है ऐसी किसी विधि को निरसित करने की कोई युक्तियुक्त मांग कभी नहीं की गई । ऐसा इसलिए है क्योंकि उस विधि का प्रत्येक दुरुपयोग करने वाले के लिए, ऐसे किसी अपराध के दस अन्य वास्तविक पीड़ित हो सकते हैं जिन्हें ऐसी विधि के संरक्षण की घोर आवश्यकता है, तो ऐसे मामलों में क्या करने की अपेक्षा है कि ऐसी विधि के दुरुपयोग को रोकने के लिए केवल विधिक साधनों को शामिल करने की ही आवश्यकता है । उसी तरह, जहां भारतीय दंड संहिता की धारा 124**क** के किसी अभिकथित दुरुपयोग पर पर्याप्त प्रक्रियागत सुरक्षोपाय अभिकथित कर लगाम लगाया जा सकता है, कुल मिलकर उपबंध को निरसित करने से देश की सुरक्षा और अखंडता के लिए गंभीर प्रतिकूल शाखा-विस्तार हो सकता है क्योंकि परिणामस्वरूप विध्वसंकारी ताकतों को अपनी नापाक कार्यसूची को आगे बढ़ाने को उन्मुक्त मार्ग मिल जाएगा ।

8. अन्य देशों में राजद्रोह विधियां

क. यूनाइटेड किंग्डम

8.1 राजद्रोह अपराध का पता स्टेच्यूट आफ वेस्टमिनिस्टर,[132] से लगाया जा सकता है, जब राजा को दैवी अधिकार का धारक माना जाता था । राजद्रोह होने को साबित करने के लिए न के वल भाषण की सत्यता बल्कि आशय पर भी विचार किया जाता था । राजद्रोह का अपराध आरंभतः 'सरकार को दिए जाने वाले अपेक्षित आवश्यक सम्मान के प्रतिकूल' भाषणों को रोकने के लिए सृजित किया गया था ।[133] **दि डे लिबेलिस फामोसिस**[134] वाला मामला सबसे पहले वाले मामलों में से एक था जिसमें 'राजद्रोहात्मक अपमान लेख', चाहे सत्य हो या मिथ्या, को दंडनीय बनाया गया था । इस मामले में यूनाइटेड किंग्डम में राजद्रोराहात्मक अपमान लेख को स्थापित किया गया ।[135] इस निर्णय का तर्काधार यह था कि सरकार की सत्य आलोचना सरकार द्वारा नियंत्रित सम्मान को बदनाम करने की अधिक क्षमता रखती है और अव्यवस्था फैलाती है, इसलिए, अधिक मात्रा के निषेध की आवश्यकता है ।

8.2 **आर.** बनाम **सुलीवन**[136] वाले मामले में न्या. फिटजगराल्ड द्वारा राजद्रोह को इस प्रकार परिभाषित किया गया :

> "राजद्रोह समाज के विरुद्ध अपराध है और लगभग देशद्रोह के सहबद्ध है और यह प्रायः थोड़े अंतराल द्वारा देशद्रोह के पूर्ववर्ती आता है। राजद्रोह स्वयं में एक व्यापक पद है और यह ऐसे सभी आचरणों को समाविष्ट करता है, चाहे यह शब्द कर्तव्य या लिखावट द्वारा हो, जो राज्य की प्रशांति भंग करने के लिए विचारित है और अज्ञान व्यक्तियों को सरकार और सम्राट की विधियों को क्षीण करने का प्रयास करने की ओर प्रेरित करता हैं । सामान्यतः, राजद्रोह का उद्देश्य असंतोष और विद्रोह फैलाना और सरकार के प्रति विपक्ष पैदा करना है ; और न्याय प्रशासन का अपमान करना ; और राजद्रोह की प्रवृत्ति लोगों को बगावत और विद्रोह के प्रति प्रदीप्त करना है ।"

---

[132] इंग्लिश पी.ई.एन., राजद्रोहात्मक अपमानलेख और आपराधिक अपमानलेख का उत्सादन का संक्षेपण (30 जून, 2009)) https://issuu.corn/englishpen/docs/englishpen_seditiouslibel_2009 पर उपलब्ध (10 जनवरी, 2023 को अंतिम बार देखा).

[133] विलियम टी. मैटन, 'राजद्रोहात्मक अपमानलेख और भाषण की स्वतंत्रता की लुप्त गारंटी' 84, कोलम्बिया ला रिव्यू 91 (1984).

[134] 77 इंग्लिश रिपोर्ट 250 (के.वी. 1606).

[135] विलियम टी. मैटन, 'राजद्रोहात्मक अपमानलेख और भाषण की स्वतंत्रता की लुप्त गारंटी' 84, कोलम्बिया ला रिव्यू 91 (1984).

[136] **आर. बनाम सुलीवन** (1868) 11 काक्स सी. सी. 44, यूनाइटेड किंग्डम विधि आयोग में उद्धृत आपराधिक विधि का संहिताकरण : देशद्रोह, राजद्रोह और सहबद्ध अपराध वर्किंग पेपर सं. 72 पृ. 4 http://www.lawcom.gov.uk/wp-contenvuploads/2016/08/No.072-Codificarion-of-the-Criminal-Law-TreasonSedition-and-Allied-Offences.pdf पर उपलब्ध (10 जनवरी, 2023 को अंतिम बार देखा) (इसके पश्चात् वर्किंग पेपर 72).

8.3 आधुनिक लोकतंत्र[137] में राजद्रोहात्मक अपमान लेख पर विधि की आवश्यकता की परीक्षा करते हुए यूनाइटेउ किंग्डम विधि आयोग ने वर्ष 1977 में **आर.** बनाम **बाउचर**[138] वाले मामले में कनाडा उच्चतम न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट किया, जिसमें यह राय दी गई थी कि केवल वे कार्य, जो संवैधानिक प्राधिकारी को अस्त-व्यस्त करते के आशय से हिंसा प्रदीप्त करते हैं और लोक अव्यवस्था या अराजकता कारित करते हैं, को राजद्रोहात्मक माना जाए ।[139] आयोग ने अपने कार्य पत्र में यह टिप्पणी की :

"इस विचार के अलावा कि पर्याप्त श्रेणी के अन्य आचरण के अपराधों का राजद्रोह की कोटि में आने की संभावना है, हम सोचते हैं कि सिद्धांतत: ऐसे उस अपराध का अवलंब लेने के बजाए इन सामान्य कानूनी और कामन ला अपराधों पर भरोसा करना बेहतर है, जिनकी यह विवक्षा है कि प्रश्नगत आचरण 'राजनैतिक' है । अत:, हमारा औपबंधिक मत यह है कि दंड संहिता में राजद्रोह के अपराध की कोई आवश्यकता नहीं है ।"

8.4 यह यूनाइटेउ किंग्डम में राजद्रोहात्मक अपमान लेख को हटाने के आरंभिक आंदोलन के रूप में चिह्नित है । अधिनियम और मानव अधिकार यूरोपियन कन्वेंशन के लक्षणों के उल्लंघन में होते हुए मानव अधिकार अधिनियम, 1998 के अधिनियमन के साथ राजद्रोहात्मक अपमानलेख के अस्तित्व का आरंभ हुआ ।[140] वैश्विक रूझान व्यापकत: राजद्रोह के विरुद्ध और स्वतंत्र भाषण के पक्ष में रहा । वर्ष 2009 में अपराध के रूप में राजद्रोह को उत्सादित करते हुए यूनाइटेड किंग्डम के न्याय मंत्रालय में राज्य के तत्कालीन संसदीय अवर सचिव ने यह कारण बताया कि :

"राजद्रोहात्मक और अपमानजनक अपमानलेख विगत युग के रहस्यपूर्ण अपराध हैं जब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को ऐसे अधिकार के रूप में नहीं देखा जाता था जैसा आजकल । ..... इस देश में इन अप्रचलित अपराधों के अस्तित्व को अन्य देशों द्वारा ऐसी समान विधियों के प्रतिधारण के औचित्य के रूप में प्रयुक्त किया गया था, जिनका सक्रिय रूप से उपयोग राजनैतिक विरोधियों को कुचलने और प्रेस स्वतंत्रता को निर्बंधित करने के लिए किया जाता है ।...... इन अपराधों को समाप्त करने से यह यू.के. को ऐसे अन्य देश जहां इनका उपयोग स्वतंत्र भाषण को कुचलने के लिए किया जाता है, की समान विधियों की चुनौती देने में अग्रगण्य रखेगा ।"[141]

---

137 वर्किंग पेपर सं. 72.

138]1951] 2 डी.एल.आर. 369.

139 वर्किंग पेपर सं. 72.

140 यूरोपियन कन्वेंशन आन ह्यूमन राइट, 1950, 213 यू.एन.टी.एस. 221.

141 पी.ए. मीडिया वकील, 'आपराधिक अपमानलेख और राजद्रोह अपराध को उत्सादित किया गया' प्रेस गजट (13 जनवरी, 2010) https://pressgazette.co.uk/publishers/broadcasVcriminal-libel-and-sedition-offences-abolished/ पर उपलब्ध (20 जनवरी, 2023 को अंतिम बार देखा).

8.5 अंततः, राजद्रोह अमानलेख को कोरोनर और न्याय अधिनियम, 2009[142] की धारा 73 द्वारा हटाया गया । राजद्रोहात्मक अपमानलेख को समाप्त करने के लिए दिए गए कारणों में एक कारण यह था :

> "राजद्रोह का कामल ला अपराध अनावश्यक और अधिभारित होते हुए, जब इसी मामले को अन्य विधान के अधीन विचार किया जाता है, जो न केवल भ्रामक और अनावश्यक है बल्कि भाषण की स्वतंत्रता पर उदासीन प्रभाव रखता है और ऐसे अन्य देशों को गलत संकेत भेजता है, जो राजद्रोहात्मक अपराधों को रोजनैतिक बहस को सीमित करने के माध्यम के रूप में वस्तुतः उपयोग करते हैं ।[143]"

8.6 1977 में यू.के. विधि आयोग की राजद्रोह विधि को हटाने की सिफारिश और 2009 में इसका अंतिम समापन दो प्रमुख कारणों पर आधारित है । पहला यह है कि राजद्रोह जैसे अपराधों से निपटने के लिए 'अन्य अपराधों की पर्याप्त परिधि हैं और दूसरा कारण राजद्रोहात्मक अपराध का राजनैतिक प्रकृति का होना है ।'[144] यह उल्लेख करना अधिक प्रासांगिक है कि यू. के. ने यू. के. विधि आयोग द्वारा सिफारिश किए जाने के पश्चात् तीन दशकों से अधिक के बाद राजद्रोह के अपराध को समाप्त किया, संभवतः आयरिश रिपाब्लिक आर्मी (आईआरएस) से अलगाववादी विध्वंसक गतिविधियों के खतरे के पश्चात् ब्रिटिश और आयरिश सरकार और उत्तरी आयरलैंड के अधिकांश राजनैतिक दलों के बीच 1998 में गुड फ्राइडे करार पर हस्ताक्षर करने के अनुसरण में विद्यमानता का अंत हो गया ।

8.7 आगे, राजद्रोह के अपराध को हटाने के पहले भी यू.के. ने वर्ष 2000 से आतंकवाद अधिनियम, 2000 ; आतंकवाद विरोधी अपराध और सुरक्षा अधिनियम, 2001 ; आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2005 ; आतंकवादी अधिनियम, 2006 ; आतंकवादी (यूनाइटेड नेशन उपाय) आदेश, 2006 और 2009 ; आतंकवाद विरोधी अधिनियम, 2008 ; कोरोनर और न्याय अधिनियम, 2005 ; आतंकवादी संपत्ति हिमीकरण (अस्थायी उपबंध) अधिनियम, 2010 ; न्याय और सुरक्षा अधिनियम, 2013 ; आतंक विरोधी और सुरक्षा अधिनियम, 2015 जैसी राजद्रोहात्मक और अलगाववादी तत्वों से

---

142 धारा 73 : कामन ला अपमानलेख अपराध, आदि का उत्सादन.

इंग्लैंड और वेल्स की कामन ला और उत्तरी आयरलैंड की कामन ला के अधीन निम्नलिखित अपराधों को उत्सादित किया जाता है -

(क) राजद्रोह और राजद्रोहात्मक अपमानलेख के अपराध ;

(ख) मानहानिकारक अपमानलेख के अपराध;

(ग) अश्लील अपमानलेख के अपराध.

143 लिबर्टी की रिपोर्ट स्टेज ब्रीफिंग और हाउस आफ कामन में कोरोनर्स और न्याय विधेयक का संशोधन https://www.libeny-human-rights.org.uVsites/default/files/liberty-s-coroners-andjustice-repon-briefing-excluding-secret- inquests-.pdf पर उपलब्ध (25 जनवरी, 2023 को अंतिम बार देखा).

144 मनोज कुमार सिन्हा और अनुरोग दीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 222 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018).

निपटने वाली अनके अधिनियमितियां पारित किए । आतंकवाद अधिनियम, 2000 की धारा 57 और 58 ऐसे किसी दस्तावेज या सामग्री के कब्जे को दंडित करने के लिए पर्याप्त व्यापक है, जो किसी आतंकवादी गतिविधि को दंडित करने के लिए व्यवहार्यत: उपयोगी हो सकती है । किसी अन्य प्रकट कार्य की कोई आवश्यकता नहीं है । हिंसा या अव्यवस्था के उद्दीपन या प्रवृत्ति को साबित करने की कोई अपेक्षा नहीं है । अभियुक्त को उपलब्ध मात्र संरक्षण ऐसे कब्जे के लिए अपने सद्भाव करे साबित करने का बचाव है ।[145] इस प्रकार, यू.के. ने राजद्रोह के पारंपारिकत: अस्तित्व अपराध को समाप्त कर दिया है, फिर भी उनके विधियों को लागू स्कीम ऐसे किसी अपराध को व्यापक रूप से समाविष्ट करते हुए जिनका राजद्रोहात्मक स्वभाव है, राज्य की सुरक्षा और अखंडता को सुरक्षित करने के लिए काफी अनुकूल है ।

ख. यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका

8.8 यूनाइटेड स्टेड आफ अमेरिका का संविधान प्रथम संशोधन-अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कम करने हुए और विधान अधिनियमित करने से राज्य को विधारित करता है। नयायविदों के बीच यह चर्चा होती रही है कि प्रथम संशोधन गारंटी का लक्ष्य राजद्रोहात्मक अपमानलेख का समूल नष्ट करना था ।[146] कई लोगों द्वारा यह तर्क किया गया कि यह सिद्धांत 'राजनैतिक दमन को न्यायिक मुखौटा प्रदान करना है'।[147] परस्पर प्रतिकूल विचारों और न्यायालयों द्वारा राजद्रोह की व्याप्ति को संकीर्ण करने के प्रयासों के बावजूद यह यूनाइटेड स्टेट में अपराध के रूप में विद्यमान है, यद्यपि इसका बहुत संकीर्ण अर्थान्वयन किया जाता है और यह भी कहा जा सकता है, इसका उपयोग नहीं होना है ।[148]

8.9 सामान्यत: यह दलील दी जाती है कि यू.एस. संविधान वाक् की स्वतंत्रता के 'निरपेक्षतावाद' मोडल का अनुसरण करता है, क्योंकि यू.एस. संविधान में इस स्वतंत्रता पर किसी व्यक्त निर्बंधन का उल्लेख नहीं है । कई लोगों द्वारा यह तर्क किया गया कि प्रथम संशोधन का लक्ष्य राजद्रोहात्मक अपमानलेख को समाप्त करना था ।[149] तथापि, इस मत का विरोध इन आधारों पर किया गया कि प्रथम संशोधन किसी तरह के भाषण को संरक्षित नहीं करता ; इसलिए यह इंगित करता है कि राजद्रोह की विधि को इसके द्वारा समाप्त किया गया, जो अपने निजी नागरिक संवेदनाओं द्वारा

---

[145] वही पृ. 223 पर

[146] विलियम टी. मैटन, 'राजद्रोहात्मक अपमानलेख और वाक् की स्वतंत्रता की लुप्त गारंटी' 84, कोलम्बिया ला रिव्यू 91 (1984).

[147] जुडिथ एस. काफलर एंड बेनेट एल. गरसमन, 'नए राजद्रोहात्मक अपमानलेख' 69 कारनेल ला रिव्यू 816 (1984).

[148] सामाजिक अपवर्जन और समावेशी नीति का अध्ययन केंद्र, नेशनल ला स्कूल आफ इंडिया यूनीवर्सिटी बंगलोर और एल्टरनेटिव ला फोरम, बंगलोर, राजद्रोह विधियां और भारत में स्वतंत्र भाषण का अंत https://www.nls.ac.in/resourceVcsseip/Files/SeditionLaws cover Final.pdf पर उपलब्ध (30 जनवरी, 2023 को अंतिम बार देखा).

[149] विलियम टी. मैटन, 'राजद्रोहात्मक अपमानलेख और वाक् की स्वतंत्रता की लुप्त गारंटी' 84, कोलम्बिया ला रिव्यू 91 पृष्ठ 4-8 (1984).

इतिहास के निर्वचन की कोटि में आता है ।[150] भाषण स्वतंत्र है किंतु प्रकृति में निरपेक्ष नहीं है, क्योंकि न्याय पालिका पुलिस शक्ति के सिद्धांत के आविष्कार द्वारा संविधान के प्रथम संशोधन से कांग्रेस द्वारा बनाई गई विधियों को संरक्षित करता है ।[151]

8.10 1798 के राजद्रोह अधिनियम द्वारा यूनाइटेड स्टेट में राजद्रोह को दंडनीय अपराध बनाया गया ।[152] इस अधिनियम के 1820 में निसरित किया गया । 1918 में, यू.एस. कांग्रेस द्वारा प्रथम विश्व युद्ध में अमेरिकन हितों को संरक्षित करने के लिए पुन: राजद्रोह अधिनियम अधिनियमित किया गया ।[153] जासूसी अधिनियम, 1917 में राजद्रोह अधिनियम, 1798 के समान कुछ उपबंध थे । कोई धर्मनिरपेक्ष भाषा बोलना या छापना कारागार में 20 वर्षों के दंड के साथ अवैध है, जो यू. एस. सेना के क्रियान्वयन या सफलता में हस्तक्षेप करते हो या सरकार या संविधान के आलोचना करते हों । यू. एस. न्यायालयों ने इस विस्तार तक घोषणा कि युद्ध में भाग लेने या न लेने के लिए जनमत संग्रह की मांग को युद्ध के समय स्वतंत्र भाषण के अधीन संरक्षित नहीं किया जा सकता है ।[154] **यर्नेस्ट** बनाम **इस्टार** वाले मामले में, एक भीड़ ने उत्साहपूर्वक ई. वी. इस्टार को यू. एस. झंडा चूमने के लिए कहा । उन्होंने यह कहते हुए ऐसा करने से इनकार किया 'यह क्या बात है' ? और कुछ नहीं बल्कि इसपर थोड़ी छपाई कर और इसके किनारे पर कुछ चिह्नों के साथ मात्र एक कपड़े का टुकड़ा है । मैं उसको नहीं चूमूंगा । यह रोगाणु से युक्त हो सकता है' । उसे फेडरल न्यायालय द्वारा मोनटाना राजद्रोह विधि के अधीन 'झंडे के बारे में अपमानजनक और निंदात्मक भाषा बोलने' और भाषा से झंडे का अपमान और 'अख्याति के विचार' के लिए दोषसिद्ध किया गया ।[155] नयायालय ने आगे यह मत व्यक्त किया कि 'देश भक्ति ऐसा सीमेंट है जो राज्य के आधार और ढ़ांचे को बांधता है । बाद वाले की सुरक्षा पहले वाले की निष्ठा पर निर्भर है । धर्म की तरह, देश भक्ति ऐसा अनिवार्य और महत्वपूर्ण गुण है, इसके अति की थोड़ी भी निंदा नहीं की जाए ।[156]'

---

[150] वही पृ. 6-8 पर

[151] मनोज कुमार सिन्हा और अनुरागदीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 204 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018).

[152] राजद्रोह अधिनियम, 1798 की धारा 2 राजद्रोह को इस प्रकार परिभाषित करती है :

"यूनाइटेड स्टेट की सरकार या कांग्रेस के दोनों सदन या राष्ट्रपति के विरुद्ध अपमानित करने के आशय से या अपमान या अपख्याति करने या यूनाइटेड स्टेट के लोगों के विरुद्ध घृणा फैलाने या राजद्रोह उकसाने या सरकार के विरुद्ध विधि विरुद्ध संयोजन उकसाने या इसे रोकने या विदेशी राष्ट्रों के शत्रुतापूर्ण इरादों में सहायता करने या प्रोत्साहित करने के लिए कोई मिथ्या, निन्दात्मक और दुर्भावपूर्ण लेख लिखना, प्रकाशित करना, कथन करना, छापना या करवाना."

[153] यह अधिनियम जासूसी अधिनियम, 1917 को बढ़ाने के लिए अधिनियमों का सेट है .

[154] अनुष्का सिंह, उदारवादी लोकतंत्रों में राजद्रोह 102 (आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2018).

[155] माइकेल वेल्च, फ्लैग वर्निंग : नैतिक संत्रास और विरोध का अपराधीकरण (एल्डाइन डे ग्रयूटर, न्यूयार्क, 2000) ; मनोज कुमार सिन्हा और अनुरागदीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 208 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018 देखें).

[156] क्लेमेंस पी. वर्क, प्रात: के पूर्व अंधेरा : अमेरिकन पश्चिम में राजद्रोह और स्वतंत्र भाषण 118 (द यूनीवर्सिटी आफ न्यू मेक्सिको प्रसे, 2006).

8.11 **एस्चोनक** बनाम **यूनाइटेड स्टेट**[157] वाले मामले में राजद्रोह अधिनियम, 1918 की विधिमान्यता का निर्णय देते हुए न्या. होल्मस ने एकमत से न्यायालय का अधिमत देते हुए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को निर्बंधित करने के लिए 'स्पष्ट और आसन्न रखता' कसौटी अधिकथित किया :

"ऐसे शब्द जो सामान्यत: और कई स्थानों पर प्रथम संशोधन द्वारा संरक्षित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के भीतर आते हैं, प्रतिषेध के अधीन हो सकते हैं जब वे ऐसी प्रकृति के हैं और ऐसी परिस्थितियों में प्रयोग किए गए हों जिससे स्पष्ट और आसनन खतरा सृजित होना हो और ऐसी सारवान बुराई पैदा करेंगे जिसे कांग्रेस को निवारित करने का अधिकार है ।"

8.12 **अब्रामस** बनाम **यूनाइटेड स्टेटे**[158] वाले मामले में यू. एस. उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि रसियन आंदोलनकारियों को दबाने के लिए प्रयोग किया गया मशीनरी के विनिर्माण को रोकने के लिए कारखानों में हड़ताल करने की अपील वाले परिपत्र के वितरण को प्रथम संशोधन के अधीन संरक्षित नहीं किया जा सकता । तथापि, न्यायमूर्ति होम्स की विसम्मत राय यूनाइटेड स्टेट में स्वतंत्र भाषण की छूट के व्यापक परिधि को प्रकट किया । उन्होंने टिप्पणी की :

"यह तत्काल बुराई का आसन्न खतरा या इसे उस बारे में भीतर लाने का आशय है, जो कांग्रेस से राय व्यक्त करने की सीमा विहित करने की अपेक्षा करना है, जहां प्राइवेट अधिकारों की कोई चिंता नहीं है ।"

8.13 **गिटलो** बनाम **न्यूयार्क**[159] वाले मामले में, अभियुक्त ने अपने समाचारपत्र 'दि रिव्येल्यूसनरी एज' में 'लेप्टवींग मेनीफेस्टो' को प्रकाशित किया, जो यू.एस. सरकार को हिंसा से गिरा देने की वकालत करता था । गिटलो ने यह तर्क किया कि 'लेख द्वारा किसी हिंसात्मक कार्रवाई को बढ़ावा नहीं दिया गया ।' उसे सम्यकत: न्यूयार्क स्टेट ला के अधीन दोषसिद्ध किया गया । उसकी दोषसिद्धि और विधि को अपराधी बनाने वाली और ऐसी वकालत दोनों की यू. एस. उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई, जिसे इसमें 'बुरी (या खतरनाक) प्रवृत्ति' कसौटी का आविष्कार किया और **स्चेनक** बनाम **यू.एस.** वाले मामले में स्थापित 'स्पष्ट और आसन्न खतरा' कसौटी के पूर्व निर्णय को खारिज किया :

"राज्य से युक्तियुक्तत: अपनी निजी शांति और सुरक्षा के लिए उपायों के अंगीकरण से अलग होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती, जब तक कि आंदोलनकारी उद्‌गारों से लोक शक्ति की वास्तविक अस्त-व्यस्तता न हो या अपने निजी नाश का आसन्न और तत्काल खतरा न हो ; किंतु यह इसके आरंभ में ही अपने निर्णय का प्रयोग कर आकस्मिक खतरे का कुचल सकता है ।"

---

[157] 249 यू. एस. 47(1919).

[158] 250 यू. एस. 616 (1919).

[159] 268 यू. एस. 652 (1925).

8.14 राजद्रोह को एलियन रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1980 (जो स्मिथ अधिनियम के नाम से ज्ञात है) के अधीन भी अपराध के रूप में लाया गया जो सरकार के हिंसात्मक तख्ता पलट की वकालत को दंडित करता है । इस अधिनियम की संवैधानिक विधिमान्यता की चुनौती **डेनिस** बनाम **यूनाइडे स्टेट**[160] वाले मामले में दी गई । पुन: स्पष्ट और असंभव खतरा कसौटी को लागू करते हुए, न्यायालय ने इन आधारों पर दोषसिद्धि को कायम रखा :

"[कार्य के] शब्दों का यह अर्थ नहीं हो सकता है, इसके पहले कि सरकार कार्य करे, वह इसके निष्पादित होने का इंतजार करे, क्योंकि योजना बनाई जा चुकी है और संकेत की प्रतीक्षा करे । यदि सरकार को ज्ञात है कि इसके उखाड़ फेंकने का लक्ष्य रखने वाला समूह अपने सदस्यों को यह शिक्षा देने का प्रयास कर रहा है और ऐसे अनुक्रम में वे ऐसा कर सकते है, जिसके द्वारा वे आगे बढ़ेंगे जब नेता यह अनुभव करे कि परिस्थितियां अनुकूल है, तो सरकार द्वारा कार्रवाई अपेक्षित है । यह तर्क कि सरकार के लिए स्वयं चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि सरकार मजबूत है, इसके पास विद्रोह को दबाने की पर्याप्त शक्तियां हैं, वह आंदोलन को आसानी से पराजित कर देगा, तो इसका कोई उत्तर नहीं है । किंतु उसके लिए उत्तर नहीं है1 निश्चित ही बल द्वारा सरकार को उखाड़ फेंकने का प्रयास कांग्रेस के लिए निवारण हेतु पर्याप्त बुराई है यद्यपि आंदोलनकारियों की अपर्याप्त संख्या या शक्ति के कारण आरंभ से ही समाप्त होने की स्थिति में है । ऐसा नुकसान, जो ऐसे प्रयासों से भौतिक और राजनैतिक दोनों तरह से राष्ट्र को होता है, सफलता की संभाव्यता के रूप में विधिमान्यता या सफल प्रयास के अव्यवहितत्व को मापना असंभव बनाता है ।"

8.15 तथापि, स्वतंत्र भाषण पर निर्बंधन का संकीर्ण अर्थान्वयन बाद वाले मामलों में किया गया । **येट्स** बनाम **यूनाइटेड स्टेट**[161] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने निरपेक्ष सिद्धांत के रूप में 'तख्ता-पलट की वकालत को कार्रवाई की वकालत' से विभेदित किया ।[162] यह कारण बताया गया कि स्मिथ अधिनियम सरकार के निरपेक्ष उखाड़ फेंकने की वकालत को दंडित नहीं करता है और डेनिस इन विभेद को किसी तरह धुंधला नहीं करता । यह अभिनिर्धारित किया गया कि वकालत के इन दोनों रुपों के बीच उत्तर यह है कि 'उन्हें जिसे वकालत संबोधित की गई है किसी बात पर मात्र विश्वास करने के बजाए कुछ बात करने के लिए अभी या बाद में कहा जाना चाहिए ।

8.16 **न्ययार्क टाइम्स** बनाम **सुलीवन**[163] वानले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि लोकतंत्र में स्वतंत्र भाषण में सांस लेने की फुरसत की अनुज्ञा दी जानी चाहिए और सरकार को ऐसी बातों को दबाने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए, जिसे वह 'अनुचित, मिथ्या या दुर्भाग्यपूर्ण' समझती है ।

---

[160] 341 यू. एस. 494 (1951).

[161] 354 यू. एस. 298 (1957).

[162] वही

[163] 376 यू. एस. 254, 273-76 (1964).

8.17 **व्हिटने** बनाम **कैलीफोर्निया**[164] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया, यदि औद्योगिक या राजनैतिक परिवर्तनों को पूरा करने के साधन के रूप में बल, हिंसा या आतंकवाद के विधिविरुद्ध कार्य या अपराध कारित करने की वकालत करने, पढ़ाने या सहायता और दुष्प्रेरित करने के लिए जानबूझकर किसी संगम का सदस्य होना या संगठित करने में लोक शक्ति और राज्य की रक्षा को ऐसा खतरा अंतवर्लित है कि ऐसे कार्यों को उसकी पुलिस शक्ति के प्रयोग दंडित किया जाना चाहिए । ऐसे कार्यों को दंडित करने वाले विधानों को मनमाना और राज्य शक्ति के अयुक्तियुक्त प्रयोग नहीं माने गए थे ।

8.18 **ब्रैंकवर्ग** बनाम **ओहियो**[165] वाले मामले द्वारा **हिवटने** वाले मामले को उलट दिया गया था, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि 'भाषण और प्रेस की स्वतंत्रता राज्य का बल के उपयोग या अतिक्रमण विधि की वकालत करने से इस बात के सिवाय मना करता है, जहां ऐसी वकालत आसन्न विधिहीन कार्रवाई को प्रदीप्त करने या उत्पादित करने का निदेश देता है और ऐसी कार्रवाई को प्रदीप्त करने या उत्पादित करने की संभावना है ।'

8.19 **बैडवर्ग** वाले मामले में अधिकथित तर्काधार यह था कि 'नैतिक औचित्य की मात्र निरपेक्ष सीख या बल या हिंसा का आश्रय लेने की नैतिक आवश्यकता हिंसा की कार्रवाई के लिए समूह तैयार करने जैसा नहीं है ।' इस मामले के अनुसरण में, अभिव्यक्ति पर निर्बंधन गहरी जांच का विषय है । इस प्रकार, आलोचना या वकालत से प्रथम संशोधन के अधीन युक्तियुक्त निर्बंधन की अर्हकता के लिए तत्काल विधिविहीन कार्रवाई का उद्दीपन होना चाहिए ।

8.20 यू.एस. संविधान यद्यपि भाषण पर प्रकट निर्बंधन को मना करता है फिर भी ऐसे विभिन्न सिद्धांत है जिनका प्रयोग घृणात्मक भाषण को विमुख करने के लिए किया जाता है । 'युक्तियुक्त श्रोता कसौटी', 'आसन्न खतरा कसौटी,' 'लड़ाई शब्द' जैसे सिद्धांत मात्र उदाहरण है। हिमीकरण प्रभाव अवधारणा को अधिकांशत: प्राय: मान्यता दी गई और मुख्यत: स्वतंत्र भाषण न्याय निर्णयन के प्रक्रियागत पहलुओं से संबंधित विनिश्चयों में स्पष्टत: उच्चरित किया गया।

ग. आस्ट्रेलिया

8.21 प्रथम व्यापक विधान जिसमें राजद्रोह के अपराध का उल्लेख था, अपराध अधिनियम, 1920 था । इस अधिनियम में राजद्रोह के उपबंध कामन विधि परिभाषा से अधिक व्यापक थे क्योंकि वस्तुनिष्ठ आशय और हिंसा या सार्वजनिक विक्षोभ का उद्दीपन इन उपबंधों के अधीन दोषसिद्ध करने के लिए अनिवार्य नहीं था । 1984 में गठित होप आयोग ने सिफारिश की कि राजद्रोह की आस्ट्रेलियन परिभाषा कामनवेल्थ परिभाषा से पंक्तिबद्ध होना चाहिए ।[166] तत्पश्चात्, राजद्रोह की परिभाषा को 1991 में राजद्रोह के उपबंधों की गिब्स कमेटी द्वारा पुन: पुनर्विलोकन किया गया ।

---

[164] 274 यू. एस. 357 (1927).

[165] 395 यू. एस. 444 (1969).

[166] आस्ट्रेलियन की सुरक्षा और आसूचना एजेंसी पर राय कमीशन, 'आस्ट्रेलियन सुरक्षा आसूचना संगठन पर रिपोर्ट' (1985) पर स्पष्ट विरोधी शब्दों पर रिपोर्ट उद्धृत.

यह सुझाव दिया गया कि जबकि राजद्रोह के अपराध को प्रतिधारित किया जाए और दोषसिद्धि उन कार्यों तक सीमित रखा जाए, जो संवैधानिक प्राधिकारी को अस्त-व्यस्त करने या उखाड़ फेंकने के प्रयोजन के लिए हिंसा उद्दीपित करते है । 2005 में, आतंकवाद विरोधी अधिनियम (सं.2) 2005 की अनुसूची 7 में संशोधन किए गए थे, जिसमें दंड संहिता अधिनियम, 1995 की धारा 80.2 और 80.3 में राजद्रोह के अपराध और बचाव को सम्मिलित किया गया । आस्टेलियन विधि सुधार आयोग (इसके पश्चात् एएलआरसी) ने पुनर्विलोकन किया कि क्या 2005 संशोधन के अधीन वर्णित अपराधों को परिभाषित करने के लिए राजद्रोह पद का प्रयोग समुचित है । विस्तृत अध्ययन के पश्चात् एएलआरसी रिपोर्ट ने यह सुझाव दिया कि :[167]

"आस्ट्रेलियन सरकार को फेडरल दंड विधि से 'राजद्रोह' पद को हटाया जाना चाहिए । इसलिए दंड संहिता (सीथ) के भाग 5.1 और खंड 80 के शीर्षक 'देशद्रोह और राजनैतिक या अंतर समूह बल या हिंसा के प्रकार' में परिवर्तित किया जाए और धारा 80.2 के शीर्षक को 'राजनैतिक या अंतर-समूह बल या हिंसा' के रूप में परिवर्तित किया जाए ।"

8.22 एएलआरसी की सिफारिश को राष्ट्रीय सुरक्षा विधान संशोधन अधिनियम, 2010 में क्रियान्वित किया गया, जिसमें राजद्रोह पद को हटाया गया और 'हिंसात्मक अपराधों के उकसाव' के प्रतिनिर्देश से प्रतिस्थापित किया गया, जो कोई उकसाया गया हिंसात्मक अपराध करता है यदि वे साशय (क) संविधान, सरकार या विधिमान्य प्राधिकारी ; या (ख) समूह या समूह के सदस्यों के विरुद्ध जो प्रजाति, धर्म, राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय या मानवजातीय उद्भव या राजनैतिक राय द्वारा विभेदित है, बल या हिंसा के उपयोग करने के लिए अन्य व्यक्ति या समूह को उकसाते है । अतः, यद्यपि नए अपराध के नाम को परिवर्तित किया जाए किंतु इसका सार कमोवेश ऐसा ही बना रहे जैसा राजद्रोह का है ।

घ. कनाडा

8.23 कनाडा में इंग्लिश कामन ला राजद्रोह अपराधों की उत्पत्ति कोर्ट आफ स्टार चैम्बर में हुई । इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजद्रोहात्मक अपमानलेख आंदोलन समझौते से उद्भूत सिविल स्वतंत्रताओं को सीमित करने हुए बाद में न्यायालयों द्वारा व्यापक रूप से विधारित किया गया ।[168] प्राधिकारियों की आलोचना से संबंधित दूसरा अपराध स्कैंडलम मैगनेटम था जो बचाव के रूप में सत्यता की अनुज्ञा देता है । तथापि, राजद्रोह के अपराध से आरोपित प्रतिवादी के लिए ऐसा कोई

---

[167] परस्पर विरोधी शब्दों पर रिपोर्ट.

[168] 1668-89 के समझौते ने औपचारिक रूप से अंग्रेजी क्रांति को समाप्त किया और इसका मुख्य बिंदु अधिकारों की घोषणा थी, जिसमें उन निबंधनों का उल्लेख किया गया था जिन पर क्राउन का प्रस्ताव किया गया और स्वीकार किया गया, वाक् स्वातंत्रय सहित संसद द्वारा यथा प्रतिनिधि प्राप्त जनता की स्वतंत्रता और संसद् के कार्यों की सर्वोच्चता स्थापित की गई । समझौते से कार्यपालिका और विधायिका के बीच सभी मुद्दों को नहीं सुलझाया गया क्योंकि इसके लागू किए जाने के संबंध में बहुत भिन्न-भिन्न निर्वचन होने लगे । इस संदर्भ में, राज्य की आलोचना पर अप्रत्यक्ष सीमाएं कार्यपालिक नियंत्रण के माध्यम से उभरी.

बचाव उपलब्ध नहीं था ।[169] उक्त अपराध की केवल यह आलोचना है कि सरकार को 'कलंकित करो' या प्राधिकारियों का 'तिरस्कार' करे । राज्य के विरुद्ध कार्रवाई के किसी सबूत की अपेक्षा नहीं है । केवल यह अपेक्षा है कि बोले गए शब्दों, षड्यंत्र या लिखित प्रकाशन (अपमानलेख) द्वारा अभिव्यक्ति का सबूत मात्र हो जिसकी प्रकृति अप्रीति और लोक शांति का संभाव्य विक्षोभ प्रोत्साहित करना हो ।[170] शताब्दियों तक राजद्रोह पर विधि समय के अनुसार विकसित हुई ।

8.24 आधुनिक कनाडा में, राजद्रोह सरकार या सरकारी प्राधिकारी के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए दसूरों को उकसाने के लिए भाषण या शब्दों का उपयोग है । कनाडा की दंड संहिता[171] की धारा 59 के अनुसार, राजद्रोहात्मक शब्दों को बोलना, राजद्रोहात्मक अपमानलेख को प्रकाशित करना या राजद्रोहात्मक षड्यंत्र का भाग होना एक अपराध है । कनाडा के उच्चतम न्यायालय ने **बाउचर** बनाम **किंग**[172] वाले मामले में राजद्रोह को 'ऐसे आचरण के रूप परिभाषित किया है चाहे शब्द, कार्य या लेख द्वारा राज्य की प्रशांति को भंग करने के लिए सुविचारित है और अज्ञात व्यक्तियों को सरकार और सम्राट की विधियों को क्षीण करते का प्रयास करने के लिए प्रेरित करता है ।' न्यायालय ने कहा कि राजद्रोह का उद्देश्य असंतोष और विद्रोह उत्प्रेरित करना और न्याय प्रशासन का अपमान करना है ।

8.25 दंड संहिता की धारा 59(1) के अनुसार, 'राजद्रोहात्मक शब्द' ऐसा है जो 'राजद्रोहात्मक आशय को व्यक्त करता है'[173]। उच्चतम न्यायालय ने यह न्यादेश दिया कि कोई 'न्यायालय की कार्यवाहियों और व्यक्तिगत न्यायाधीशों की स्वतंत्र और निष्पक्ष और उदार भावना से स्वतंत्र आलोचना कर सकता है । किंतु यह द्वैष के बिना होना चाहिए और भ्रष्ट या दुर्भावनापूर्ण हेतु का दोषारोपण करने वाला नहीं होना चाहिए ।'

8.26 दंड संहिता की धारा 59(2) राजद्रोहात्मक अपमानलेख को एक ऐसे रूप में परिभाषित करती है 'जो राजद्रोहात्मक आशय को अभिव्यक्त करता है ।'[174] उच्चतम न्यायालय द्वारा अपमानलेख होने के लिए यह कहा गया है कि विधिविरुद्ध साधनों द्वारा सरकार या राजा के प्रति 'अप्रीति' उत्तेजित करता है या घृणा या अपमान प्रदर्शित करता है ।

8.27 'राजद्रोहात्मक षड्यंत्र' को अभी दंड संहिता की धारा 59(3) में 'राजदोहात्मक आशय को कार्यान्वित करने के किए दो या अधिक व्यक्तियों के बीच करार' के रूप में परिभाषित किया गया है

---

[169] बैरी राइट, "ऊपरी कनाडा में राजद्रोह : प्रतिकूल वैधता" 29 लेवर/ले ट्रैवेल 14 (स्प्रिंग 1992).

[170] जे. एफ. स्टीफेन, II आपराधिक विधि का इतिहास 298 (लंदन, 1883) ; टी. ए. ग्रीन, अंतःकरण के अनुसार अधिमत : इंग्लिश आपराधिक विचारण जूरी का परिप्रेक्ष्य 319 (शिकागो, 1985).

[171] आपराधिक संहिता (आर. एस. सी., 1985, सी.-46) https://lawsJoisjustice.gc.ca./eng/acts/c-46lsection5g.html पर उपलब्ध (10 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[172] 1950 कैन. एल. 112 (एस.सी.सी.), [1951] एस. सी. आर. 265.

[173] आपराधिक संहिता (आर. एस. सी., 1985 सी.-46) https://laws-loisjustice.gc.ca,/eng/acts/c-46lsection59.html पर उपलब्ध (10 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

[174] वही

।[175] उच्चतम न्यायालय के अनुसार, यह तभी होता है जब लोकग एक साथ मिलकर सरकार के विरुद्ध असंतोष और अप्रीति पैदा करते है और ईष्यालुता, घृणा और बुरी भावना दिखाते हैं । यद्यपि संहिता में 'राजद्रोहात्मक आशय' को व्यापक रूप से परिभाषित नहीं किया गया है किंतु धारा 59(4) राजद्रोहात्मक आशय की उपधारणा स्थापित करती है जब कोई कनाडा के भीतर सरकार के परिवर्तन को पाने के साधन के रूप में विधि के प्राधिकार के बिना बल के उपयोग हेतु (क) पढ़ाता है या वकालत करता है या (ख) कोई लेख प्रकाशित करता है या परिचालित करता है ।[176]

8.28 दंड संहिता की धारा 61 के अनुसार, राजद्रोह को 14 वर्ष के अधिकतम कारावास से दंडनीय अभ्यारोप्य अपराध के रूप में माना जाता है । तथापि, सरकार या इसकी नीतियों के विरुद्ध शांतिपूर्ण और विधिसम्मत विरोध को राजद्रोह नहीं माना जाता है ।

9. निष्कर्ष : धारा 124क के प्रतिधारण के आधार

9.1 भारत में राजद्रोह की विधि की बारीकियों का विस्तार से चर्चा करते हुए विधि आयोग की यह विचारित राय है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124क को प्रतिधारित किया जाए । इसके कारणों को नीचे संक्षेप में उल्लिखित किया गया है ।

क. भारत की एकता और अखंडता का सुरक्षोपाए करना

---

[175] वही

[176] वही

9.2 पूर्वोक्त अध्याय 6 में विस्तार से की गई चर्चा के अनुसार, भारत की आंतरिक सुरक्षा के असंख्य खतरे विद्यमान है। **निहारेन्दु दत्त मजूमदार** वाले मामले में फेडरल न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि 'उखाड़ फेंकने का प्रयास करने के विरुद्ध स्वयं के संरक्षित रखने का प्रत्येक संगठित समाज का अधिकार इनकार से परे है ।'[177] फिटजाराल्ड का यह कहना है कि 'किसी समाज की मूल अपेक्षा सर्वनाश या अधीनता के विरुद्ध' स्वयं को संरक्षित करने की योग्यता है ; और किसी सरकार का मुख्य कर्तव्य राज्य और उसकी संस्थाओं को बाह्य और आंतरिक हमले से सुरक्षित रखना है ।'[178] उन्होंने आगे यह मत व्यक्त किया कि स्वतंत्रता का उपभोग करने की पूर्व शर्त राज्य की सुरक्षा सुनिश्चित करना है क्योंकि 'स्थिरता की ऐसी गारंटी के बिना सिविल और आपराधिक दोनों शेष विधि का अधिकांश भाग अप्रभावी हो जाता है ।'[179] केदार नाथ सिंह वाले मामले में मुख्य न्यायमूर्ति बी. पी. सिन्हा ने यह मत व्यक्त किया 'प्रत्येक राज्य, चाहे जो भी सरकार का रूप हो ऐसे लोगों को दंडित करने की शक्ति से युक्त होना चाहिए, जो अपने आचरण द्वारा राज्य की सुरक्षा और स्थिरता को जोखिम में डालते हैं या अनिष्ठा की ऐसी भावना का प्रचार करते हैं, जो राज्य लोक अव्यवस्था को विधारित करने की प्रवृति रखती है ।'

9.3 यद्यपि आतंकवादी मामलों से निपटने के लिए केंद्रीय और राज्य विधियां (विधि विरुद्ध क्रियाकलाप निवारण अधिनियम, 1967 और महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 1999 आदि जैसी) है । भारतीय दंड संहिता की धारा 124क मुद्दे से निपटने के लिए पारंपरिक दंड तंत्र के रूप में कार्य करता है । अलगाववादी प्रवृत्तियों के त्वरित और प्रभावी दमन राष्ट्र के तत्काल हित में है । जैसा कि सोली जे. सोराबजी ने एक बार धारा 124क के निर्देश में कहा था, 'उपबंध का उचित निर्वचन और सही प्रयोग भारतीय राज्य की अखंडता को सुरक्षित और संरक्षित रखता है और ऐसे लोगों के लिए निवारक भी है, जो हिंसा के उद्दीपन का कार्य और ऐसे कार्य जो लोक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने के लिए उद्यत है ।'[180] भारत के विरुद्ध अतिवाद फैलाने और सरकार के प्रति घृणा भरने में कई बार प्रतिकूल विदेशी ताकतों द्वारा आरंभन और सुकर बनाने में सोशल मीडिया की प्रचुर भूमिका के कारण कानून में ऐसे उपबंध को बना रहना कुल मिलाकर बहुत अपेक्षित है । भारतीय दंड संहिता की धारा 124क की राष्ट्र विरोधी और अलगाववादी तत्वों से लड़ने में इसकी अपनी उपयोगिता है क्योंकि यह हिंसा और अवैध साधनों द्वारा निर्वाचित सरकार को उखाड़ फेंकने के प्रयासों से संरक्षित करती है । विधि द्वारा स्थापित सरकार का सतत अस्तित्व राज्य की सुरक्षा और स्थिरता की आवश्यक शर्त है । इस संदर्भ में, धारा 124क को प्रतिधारित करना और यह

---

[177] ए. आई. आर. एफ. सी. 22, पृष्ठ 48 पर.

[178] पी. जे. फिट्गेराल्ड, आपराधिक विधि और दंड, 83 (आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 1962).

[179] वही

[180] सोली जे. सोराब जी, 'स्वतंत्रता की सीमाएं' इंडियन एक्प्रेस (30 जनवरी, 2018) https://indianexpress.cor/anicle/opinion/columns/sedition-law-constitution-law-freedom-of-speech-5044091/ (15 मार्च, 2023 को अंतिम बार देखा).

सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि ऐसे विध्वंसक क्रियाकलापों को उनके आरंभ में ही कुचल दिया जाए ।

ख. राजद्रोह अनुच्छेद 19(2) के अधीन एक युक्तियुक्त निर्बंधन है

9.4 यह दलील कि धारा 124क संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अतिक्रमण में है, कई कारणों से कोई आधार नहीं बनाती । पहला, जैसाकि इस रिपोर्ट के अध्याय 3 में पहले कहा गया है, संविधान सभा की बहस के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि संविधान सभा ने 'जो राज्य की सुरक्षा को क्षीण करता है या इसे उखाड़ फेंकने की प्रवृत्ति रखता है' के स्थान पर 'राजद्रोह' रखा क्योंकि उन्होंने बाद वाले पद की अधिक महत्व और अधिक विस्तारक माना । दूसरा, संविधान के प्रथम संशोधन ने अनुच्छेद 19(1)(क) पर और निर्बंधन के रूप में 'लोक व्यवस्था' विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण संबंध और 'अपराध का उद्दीपन' शब्दों को सम्मिलित किया । उच्चतम न्यायालय ने केदार नाथ सिंह वाले मामले में धारा 124क की संवैधानिकता पर विचार करने हुए यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 124क संवैधानिक है क्योंकि वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अधिरोपित करने का ईप्सित निर्बंधन अनुच्छेद 19(2) के अधीन युक्तियुक्त निर्बंधन है । तीसरा, जैसाकि उच्चतम न्यायालय द्वारा अनेक विनिश्चयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है, जहां किसी उपबंध के दो निर्वचन संभव हों वहां एक जो संबद्ध उपबंध को संवैधानिक ठहराता है और दूसरा, जो इसे असंवैधानिक ठहराता है, पहले वाला अर्थान्वयन बाद वाले पर प्रभावी होना चाहिए । **जनहित अभियान** बनाम **भारत संघ**[181] वाले मामले में इसके बारे में उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्तियों को नीचे दोहराया जा रहा है :

> "610 पिछले कई मामलों में इस न्यायालय द्वारा पठन सिद्धांत को लागू किया गया है ; तथापि, प्रत्येक दृष्टांत में, यह स्पष्ट किया गया है कि इसका उपयोग बिरलतम और सीमित परिस्थितियों में किया जाए । इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय के विधिशास्त्र से यह स्पष्ट है कि उपबंध के पठन का कार्य तभी किया जाना चाहिए जब ऐसा करते समय कानून के क्रियान्वयन को 'अधिनियम के प्रयोजन के भीतर और संवैधानिक विधिमान्यता' को कायम रखा जा सकता है ।"

दिल्ली परिवहन निगम बनाम **डीटीसी मजदूर कांग्रेस** वाले मामले में न्यायमूर्ति सावंत ने इस सिद्धांत को संक्षेप में दोहराया :

> "255. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पठन या कानून को नया रूप देने के सिद्धांत को सीमित स्थितियों में लागू किया जा सकता है । प्रथमतः, इसका आवश्यकतः उपयोग किसी कानून को इसके असंवैधानिकता के कारण अभिखंडित किए जाने से बचाने के लिए किया जाता है । यह इस सिद्धांत का विस्तार है कि जो निर्वचन संभव हो - एक इसे संवैधानिक ठहराता हो और दूसरा इसे असंवैधानिक ठहराता हो तो पहले वाले को अधिमान दिया जाए । असंवैधानिक कानून अधिनियमित करने की विधायिका की अक्षमता या संविधान के किन्हीं उपबंधों के

[181] 2022 एस. सी. सी. आनलाइन 1540.

अतिक्रमण से हो सकता है । दूसरी स्थिति जो अपनी सहायता की अपेक्षा करता है, यह है कि जहां कानून के उपबंध अस्पष्ट और संदिग्ध है और कानून के विषय से विधायिका का आशय एकत्रित करना संभव है तो ऐसा संदर्भ जिसमें उपबंध आता है और ऐसा प्रयोजन जिसके लिए यह बनाया गया है ....।"

ग. आतंकवाद विरोधी विधानों का अस्तित्व धारा 124क की आवश्यकता को निवारित करता है

9.5 विधि विरुद्ध क्रियाकलाप निवारण अधिनियम, 1967 (यूएपीए) का अधिनियमन आतंकवादी क्रियाकलापों को निवारित करने और आतंकवादियों की संपत्तियों और अन्य आर्थिक संसाधनों को स्थिर करने हेतु संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् द्वारा पारित विभिन्न संकल्पों को ध्यान में रखते हुए किया गया जैसाकि उद्देश्यों और कारणों के कथन में यथा कथित इसका उद्देश्य भारत की भू-राज्य क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता के विरुद्ध किए जाने वाले विध्वंसक क्रियाकलापों से निपटने के लिए राज्य प्राधिकारियों को समर्थ बनाना था । अधिनियम 'संघ से भारत के भू-क्षेत्र के किसी भाग के पृथक्करण' की मांग/प्राख्यान के बारे में भी है ।[182]

9.6 यूएपीए को 2004 में संशोधित किया गया,[183] जिसके द्वारा आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002 (पोटा) के कतिपय उपबंधों को इसमें सम्मिलित किया गया । वर्ष 2008 में यूएपीए को पुन: संशोधित किया गया,[184] जिसके द्वारा पोटा और आतंकवादी और विध्वंसक क्रियाकलाप अधिनियम, 1987 (टाडा) के विषयक अन्य उपबंधों को जोड़ा गया । आतंकवादी कार्य की परिभाषा की अस्पष्टता को दूर करते हुए यूएपीए को 2012 में भी संशोधित किया गया ।[185] ऐसे अपराधों को सम्मिलित करने के लिए जो राष्ट्र की आर्थिक सुरक्षा को खतरा पहुंचा सकते है । इसी प्रकार राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (एनएसए) का अधिनियमन वर्ष 1980 में निवारक निरोध के लिए एक विधि का उपबंध करने के कथित उद्देश्य के साथ किया गया ।

9.7 जहां एनएसए आतंकवादी या विध्वंसक प्रकृति के क्रियाकलापों से निपटने की एक विशेष विधि है वहीं एनएसए केवल निवारक निरोध के बारे में है । मोटे तौर पर, इन जैसे राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित विशेष विधियां और आतंक विरोधी विधान राज्य के प्रति लक्ष्यित अपराधों के निवारण या अपराध किए जाने को दंडित करने के लिए है। दूसरी ओर भारतीय दंड संहिता विधि द्वारा स्थापित लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित सरकार को हिंसा, अवैध और असंवैधानिक उखाड़ फेंकने को निवारित करने के लिए है । अत:, पहले वाले का अस्तित्व भारतीय दंड संहिता की धारा 124क में परिकल्पित अपराध के सभी तत्वों को विवक्षा द्वारा समाविष्ट नहीं करता ।

9.8 आगे, भारतीय दंड संहिता की धारा 124क जैसे उपबंधों के अभाव में, ऐसी कोई अभिव्यक्ति, जो सरकार के विरुद्ध हिंसा उद्दीपित करती है, का विचार निरपवाद रूप से ऐसी विशेष विधियों और

---

[182] विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967, धारा 2(i).

[183] विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) (संशोधन) अधिनियम, 2004 (2004 का 29).

[184] विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) (संशोधन) अधिनियम, 2008 (2008 का 35).

[185] विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 2012 (2013 का 3).

आतंकवाद विरोधी विधानों के अधीन किया जाएगा, जिसमें अभियुक्त से निपटने के लिए और अधिक कठोर उपबंध है ।

घ. राजद्रोह औपनिवेशिक विरासत होने के कारण इसके निरसन का विधिमान्य आधार नहीं है

9.9 प्राय: यह कहा जाता है कि राजद्रोह का अपराध ऐसे युग, जिसमें यह अधिनियमित किया गया औपनिवेशिक विरासत है, विशेषकर जब यह भारत के स्वतंत्रता संग्राम के योद्धाओं के विरुद्ध उपयोग का इतिहास प्रदर्शित करना है । तथापि, उस आधार पर भारतीय विधिक प्रणाली की संपूर्ण अवसंरचना औपनिवेशिक विरासत हैं । पुलिस बल और अखिल भारतीय सेवा के विचार भी ब्रिटिश युग के अल्पकालिक अवशिष्ट है । किसी विधि या संस्था को मात्र 'औपनिवेशिक' पद का श्रेय देना स्वयं पुरावशेष के विचार को श्रेय नहीं देता है ।[186] किसी विधि का औपनिवेशिक उद्भव स्वयं द्वारा ही प्रासमिक तटस्थ है ।[187] मात्र यह तथ्य कि कोई विशिष्ट विधिक उपबंध अपने उद्भव से औपनिवेशिक है, स्वत: उसके निरसन का विधिमान्य मामला नहीं हो सकता है । परिस्थितियों के वर्तमान आलोक में किसी ऐसे विधिक उपबंध की क्या अपेक्षा है उसे विवेचनात्मक रूप से विश्लेषित किए जाने की आवश्यकता है ।

9.10 आगे, औपनिवेशिक सरकार विनिश्चित ही एक विदेशी सरकार है जहां शासक और शासित के बीच संबंध मालिक और नौकर का है । प्रतिकूलत:, लोकतांत्रिक रूप की सरकार लोगों की इच्दा पर आधारित है, जिसमें शासक केवल लोगों का नौकर है क्योंकि यह जनता ही है जो शासक को उसके पद के लिए निर्वाचित करना है ।[188] सरकार के अपने रूप के किसी विकल्प से वंचित होने के कारण औपनिवेशिक शासकों के पास अपने निजी हितों को प्राप्त करने के लिए ही अपने सरकार के नुकसानहीन आलोचना को दंडित करने के सिवाए कोई विकलप नहीं था । तथापि, लोकतांत्रिक व्यवस्था में अपने सरकार की स्वस्थ और रचनात्मक आलोचना करने के लिए लोग स्वतंत्र है । भारतीय दंड संहिता की धारा 124क वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का प्रयोग के आवरण में हिंसा उकसाने या लोक अव्यवस्था कारित करने की अनिष्टकर प्रवृति को दंडित करने के लिए है ।

ङ. प्रत्येक अधिकारिता में भिन्न-भिन्न वास्तविकताएं

9.11 प्रत्येक देश की विधिक प्रणाली अपनी निजी भिन्न-भिन्न वास्तविकताओं का सामना कर रही हैं । उसी आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का निरसन कि कतिपय देशों ने ऐसा किया है निश्चय ही भारत में विद्‌यमान की सुस्पष्ट ठोस वास्तविकताओं के प्रति आंखे बंद करना है । आगे जैसा इस रिपोर्ट के अध्याय 8 में किए गए अन्य अधिकारिताओं में राजद्रोह विधियों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा इंगित किया गया है, यह स्पष्ट है कि संपूर्ण विश्व के अधिकांश प्रगतिशील

---

[186] ए. बारा "औपनिवेशिक विधियों के बारे में 'औपनिवेश' क्या है ?" 31(2) अमेरिकन यूनीवर्सिटी इंटरनेशनल ला रिव्यू (2016).

[187] वही

[188] मनोज कुमार सिन्हा और अनुरागदीप, भारत में राजद्रोह विधि और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, 187-188 (भारतीय विधि संस्थान, नई दिल्ली, 2018).

लोकतांत्रिक देशों में से कुछ देशों में अपराध के मुख्य तत्व को दूर किए बिना राजद्रोह विधि में मात्र दिखावटी परिवर्तन किए गए हैं । यू.एस., यू.के. आदि जैसी इन तुलनात्मक अधिकारिताओं की अपना निजी इतिहास, भूगोल, जनसंख्या, विविधता, विधियां आदि हैं जिसकी तुलना भारतीय परिस्थितियों से नहीं की जा सकती । इसके बावजूद इनमें से कुछ देशों ने वस्तुत: यह किया है कि उन लोगों ने अपने राजद्रोह विधि को आतंक विरोधी विधानों में विलीन कर दिया है ।

10. सिफारिश

क. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क में केदार नाथ सिंह वाले मामले के निर्णय के तर्काधार का सम्मिलन

10.1 केदार नाथ सिंह वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित कसौटी विधि की स्थिर प्रतिपादना है । जब तक प्रयुक्त शब्द या प्रश्नगत कार्रवाई से हिंसा के उकसाने या लोक अव्यवस्था कारित करने या लोक शांति भंग कारित करने की प्रवृत्ति नहीं होती है तब तक कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 124क की परिधि के भीतर नहीं आएगा । तथापि, ऐसे किसी व्यक्त उपदर्शन के अभाव में, धारा 124क का पठन मात्र अस्पष्ट और भ्रामक प्रतीत हो सकता है परिणामस्वरूप संबद्ध प्राधिकारियों द्वारा इसका गलत निर्वचन और दुरुपयोजन होता है । परिणामत:, हम सिफारिश करते हैं कि केदार नाथ सिंह वाले मामले के तर्काधार को धारा 124क की पदावली में शामिल किया जाए, जिसमें कि उपबंध के निर्वचन, समझ और प्रयोजन में अधिक स्पष्टता लाई जा सके ।

ख. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के किसी अभिकथित दुरुपयोजन को रोकने के लिए प्रक्रियागत मार्गदशक सिद्धांत

10.2 हमारी विचारित राय में, भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के किसी अधिकथित दुरुपयोग को रोकने के लिए, यह सुझाव दिया जाता है कि इस धारा के अधीन अपराध किए जाने की बाबत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किए जाने के पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (सीआरपीसी) की धारा 196(3) के अधीन यथा उपबंधित समरुप आज्ञापक अनुक्रम अपनाया जाना चाहिए । ऐसे कतिपय प्रक्रियागत सुरक्षोपायो, जो केंद्रीय सरकार द्वारा इस बाबत मोडल मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर अधिकथित किया जा सकता है, को सम्मिलित कर इसे प्राप्त किया जा सकता है । अनुकल्पत:, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 में निम्नलिखित रीति से **एक** परंतुक शामिल कर संशोधन किया जाए :

> "परंतु आगे यह कि भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 124क के अधीन अपराध के लिए कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तब तक दर्ज नहीं की जाएगी जब तक निरीक्षक की पंक्ति से अन्यून का पुलिस अधिकारी प्रारंभिक जांच नहीं **करता** और उक्त पुलिस अधिकारी द्वारा दिए गए रिपोर्ट के आधार पर यथास्थिति, केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करने की अनुज्ञा नहीं देती ।"

10.3 निरीक्षक की पंक्ति से अन्यून उक्त पुलिस अधिकारी यह सुनिश्चित करने के सीमित प्रयोजनों के लिए कि क्या प्रथमदृष्ट्या मामला बनता है और कुछ अकाट्य साक्ष्य हैं, सात दिनों के भीतर प्रारंभिक जांच करेगा । उक्त पुलिस अधिकारी लिखित में इसका कारण अभिलिखित करेगा और तत्पश्चात् ही पूर्वोक्त प्रस्तावित परंतुक के अधीन अनुज्ञा दी जाएगी । **एस. जी. बोम्बेटकेरे** बनाम **भारत संघ**[189] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों पर विचार करते हुए विधि आयोग द्वारा इस सुरक्षोपाय की सिफारिश की जा रही है ।

ग. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क के लिए विहित दंड की विषमता का निराकरण

10.4 विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट ने धारा 124क के लिए दंड को बहुत 'विषम' कहा था । यह आजीवन कारावास या मात्र तीन वर्ष का कारावास हो सकता है, किंतु न्यूनतम दंड केवल जुर्माना ही हो, ऐसा नहीं हो सकता है। भारतीय दंड संहिता के अध्याय VI में अपराधों के लिए यथा उपबंधित दंडादेशों की तुलना से यह संकेत मिलता है कि धारा 124क के लिए विहित दंड में साफ विषमता है । अतः, यह सुझाव दिया जाता है कि अध्याय VI के अधीन अन्य अपराधों के लिए उपबंधित दंड की स्कीम से संगत लाने के लिए इस उपबंध को पुनरीक्षित किया जाए । यह न्यायालयों को किए गए कार्य के मापमान और गंभीरता के अनुसार राजद्रोह के मामले के लिए दंड अधिनिर्णीत करने में काफी गुंजाइश अनुज्ञात करेगा ।

घ. भारतीय दंड संहिता की धारा 124क में संशोधन का प्रस्ताव

10.5 भारतीय दंड संहिता की वर्तमान धारा 124क इस प्रकार है :-

"124क. **राजद्रोह** - जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरुपण द्वारा या अन्यथा भारत में विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा का अवमान पैदा करेगा, या पैदा करने का, प्रयत्न करेगा या अप्रीति प्रदीप्त करेगा, या प्रदीप्त करने का प्रयत्न करेगा, वह आजीवन कारावास से, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकेगा या तीन वर्ष तक के कारावास से, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकेगा या जुर्माने से दंडित किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण 1 - 'अप्रीति' पद के अंतर्गत अभक्ति और शत्रुता की समस्त भावनाएं आती है ।

स्पष्टीकरण 2 - घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किए बिना या प्रदीप्त करने या प्रयत्न किए बिना, सरकार के कामों के प्रति विधिपूर्ण साधनों द्वारा उनको परिवर्तित कराने की दृष्टि के अननुमोदन प्रकट करते वाली टीका-टिप्पणियां इस धारा के अधीन अपराध नहीं है ।

स्पष्टीकरण 3 - घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किए बिना या प्रदीप्त करते का प्रयत्न किए बिना, सरकार की प्रशासनिक या अन्य क्रिया के प्रति अननुमोदन प्रकट करने वाली टीका-टिप्पणियां इस धारा के अधीन अपराध गठित नहीं करती ।"

---

189 (2022) 7 एस. सी. सी. 433, इस रिपोर्ट का पैरा 4.32 देखें.

10.6 पूर्वोक्त के अनुसार, हम प्रस्तावित करते हैं कि धारा 124क को इस प्रकार संशोधित किया जाए

"124**क. राजद्रोह** - जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरुपण द्वारा या अन्यथा भारत में विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति हिंसा उकसाने या लोक अव्यवस्था कारित करने की प्रवृत्ति के साथ घृणा या अवमान पैदा करते का प्रयत्न करेगा या अप्रीति प्रदीप्त करेगा या प्रदीप्त करने का प्रयत्न करेगा, वह आजीवन कारावास से, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकेगा या ऐसी अवधि के कारावास से जो सात वर्ष तक की हो सकेगी, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकेगा या जुर्माने से दंडित किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण 1 - 'अप्रीति' पद के अंतर्गत अभक्ति और शत्रुता की समस्त भावनाएं आती है ।

स्पष्टीकरण 2 - घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किए बिना या प्रदीप्त करने या प्रयत्न किए बिना, सरकार के कामों के प्रति विधिपूर्ण साधनों द्वारा उनको परिवर्तित कराने की दृष्टि के अननुमोदन प्रकट करने वाली टीका-टिप्पणियां इस धारा के अधीन अपराध नहीं है ।

स्पष्टीकरण 3 - घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किए बिना या प्रदीप्त करने का प्रयत्न किए बिना, सरकार की प्रशासनिक या अन्य क्रिया के प्रति अननुमोदन प्रकट करने वाली टीका-टिप्पणियां इस धारा के अधीन अपराध गठित नहीं करती ।

स्पष्टीकरण 4 - 'प्रवृत्ति' पद का अभिप्राय वास्तविक हिंसा या हिंसा के आसन्न खतरे के सबूत के बजाए हिंसा उकसाने या लोक अव्यवस्था कारित करने का झुकाव मात्र है ।"

तदनुसार आयोग सिफारिश करता है ।

---XXX---

ह0/-

[न्यायमूर्ति ऋतु राज अवस्थी]

अध्यक्ष

ह0/-	ह0/-	ह0/-
[न्यायमूर्ति के. टी शंकरन]	[प्रो.(डा.) आनन्द पालीवाल]	[प्रो. डी. पी. वर्मा]
सदस्य	सदस्य	सदस्य

ह0/-	ह0/-
[डा. नितेन चंद्रा]	[डा. रीता वशिष्ठ]
सदस्य सचिव और सदस्य पदेन	सदस्य पदेन